INTERNATIONAL MAGAZINE
RNI No. 64884/96

October 2018

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीअै एकु एकु वखाणीअै।।
आतम पसारा करण हारा प्रभ बिनां नहीं जाणीअै।।

आत्म मार्ग

धंन धंन रामदास गुरु
जिनि सिरिआ तिनै सवारिआ।।

सन्त बाबा लखबीर सिंह जी, पृथक-पृथक क्षेत्रों में मनोहर कीर्तन द्वारा निहाल करते हुए

चमकौर साहिब

रोपड़

बटाला

आत्म मार्ग

वर्ष तेइसवां - अंक नौवां, अक्टूबर 2018

गुरद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब

संचालक

श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज (ब्रह्मलीन)
तथा संत माता (बीजी) रणजीत कौर जी (ब्रह्मलीन)

चेयरमैन
सन्त बाबा लखबीर सिंह जी

एडिटर-इन-चीफ
सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

प्रबन्ध सम्पादक
भाई (डा.) सुखविंदर सिंह

मुख्य सम्पादक
डा. जगजीत सिंह (97798 16909)

मासिक पत्रिका न पहुँचने सम्बन्धी पूछताछ

यदि आपको माह की 15 तारीख तक आत्म मार्ग पत्रिका प्राप्त नहीं हो पाती है तो आप कृप्या निम्नलिखित सम्पर्क नम्बरों पर कार्यलय समय प्रात: 10.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक सम्पर्क करने की कृपा करें -

सम्पर्क न. - **84378-12900, 94172-14391, 94172-14379**

Email : atammarg1@yahoo.co.in

Postal Address for any Enquiry, Money Order's :

'ATAM MARG' MAGAZINE
Gurdwara Ishar Parkash, Ratwara Sahib (New Chandigarh) P.O. Mullanpur Garibdas, Teh. Kharar, Distt. S.A.S. Nagar (MOHALI) - 140901, Pb. India

SUBSCRIPTION - शुल्क (देश)

वार्षिक	आजीवन सदस्यता	प्रति कापी
300/-	3000/-	30/-
320/-	3020/-	(For outstation cheques)

SUBSCRIPTION FOREIGN (विदेश)

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
Canada	80 Can $	800 Can $
Australia	80 Aus $	800 Aus $

प्रकाशन के समस्त अधिकार सुरक्षित हैं।

प्रकाशक, मुद्रक एवं सम्पादक सन्त बाबा हरपाल सिंह जी ने 'आत्म मार्ग' जै आफ सैट प्रिंटर्ज, 905 इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज़-2, चण्डीगढ़ से छपवा कर मुख्य कार्यालय 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब, डाकखाना मुल्लांपुर, तहसील खरड़, एस.ए.एस. नगर (मोहाली), पंजाब से प्रकाशित किया।

Please visit us on internet at :-
For Atam Marg Email : atammarg1@yahoo.co.in,
Website & Live video -

www.ratwarasahib.in
www.ratwarasahib.org } **(Every sunday)**

Email: sratwarasahib.in@gmail.com

विदेशों में आत्म मार्ग की शाखाएँ

अमेरिका - बाबा सतनाम सिंह अटवाल
फोन तथा फैक्स : 001-408-263-1844

कैनेडा - भाई सरमुख सिंह पंनू, वैनकूवर
फोन : 001-604-433-0408

भाई तरसेम सिंह बैंस - मोबाइल 001-604-862-9525
फोन : 001-604-288-5000

भाई जसबीर सिंह राणू - फोन : 001-604-589-9189

इंगलैंड - बीबी गुरबख्श कौर तथा भाई जगतार सिंह जग्गी
फोन:0044-121-200-2818 फैक्स :0044-121-200-2879,
भाई अरविंदर सिंह (राज) मोबाइल:0044-7968734058

आस्ट्रेलिया : बीबी जस्प्रीत कौर: मोबाइल-0061-406619858

रतवाड़ा साहिब की संस्थाओं के सम्पर्क नम्बर

* आत्म मार्ग मैगज़ीन (पंजाबी, हिन्दी तथा अंग्रेजी)
9417214391, 9417214379, 8437812900

* गुरू गोबिंद सिंह विद्या मन्दिर सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(CBSE) - 0160-2255003

* माता साहिब कौर मुफ्त सिलाई सैंटर - **96461-01996**

* सन्त वरियाम सिंह मैमोरियल पब्लिक सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(PSEB) अंग्रेजी माध्यम - **95920-55581**

* सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल (मुफ्त)
98786-95178, 92176-93845

* इंटरनैशनल डिवाइन स्कूल आफ़ नर्सिंग -
94172-14382

* इंटरनैशनल डिवाइन कालेज आफ़ ऐजूकेशन (बी. एड.)
94172-14382

* अकाल वृद्ध आश्रम (मुफ्त) **98157-28220**

विशेष जानकारी के लिए

श्री मान जी	-	98551-32009
श्री आखण्ड पाठ साहिब बुकिंग	-	94647-12900
आडियो-वीडियो लाईब्रेरी	-	98728-14385, 98555-28517
केवल टी.वी. नेटवर्क	-	94172-14385

अन्य सम्पर्क नम्बर
98889-10777, 96461-01996, 9417214381

विषय-सूची

1. सम्पादकीय 5
भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

2. बारहमाहा 7
डा. जगजीत सिंह

3. बिनु हरि भजन नाही छुटकारा।। 11
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

4. बाबाणियाँ कहानियाँ 23
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

5. प्यारे की लालसा - गुरू नानक देव जी तथा राए बुलार 26
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

6. आत्म ज्ञान 32
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

7. हरि कीरति साधसंगति है सिरि करमन कै करमा।। 36
सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

8. गुरु नानक आगमन 41
डा. भाई वीर सिंह जी

9. गजलें - भाई नन्द लाल जी 43

10. नूरानी मिलाप 45
भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

11. गुरबाणी अर्थ भण्डार 46
सन्त हरी सिंह जी 'रन्धावे वाले'

12. वारां भाई गुरदास जी 47

13. गुर रामदासु राखहु सरणाई 48
डा. जगजीत सिंह

14. स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार 53
डा. स्वामी राम जी

15. विशेष जानकारी - बैंक खाता, आत्म मार्ग मैगजीन सदस्यता प्रारूप, अस्पताल जानकारी, तथा पुस्तक सूची 55

सम्पादकीय

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

हरि जनु ऐसा चाहीऐ जैसा हरि ही होइ॥

स्वयं की, किसी अथाह शक्ति की अधीनता कबूल करने के सम्बन्ध में गुरबाणी के अन्दर विनम्रता को दर्शाने वाले बहुत से शबद आए है। इनमें से विशेष तौर पर दास, सेवक, भक्त, चेरी, गोले, जन, हरिजन, बारिक, पूत इत्यादि हैं। इन सबमें से एक ही भावना प्रकट होती है कि हम उस अकालपुरुष रूपी समर्थ सतगुरू के प्यारे हैं। गुरसिक्ख के अन्दर एक लहर प्यार की उठती है तो सतगुरू के अन्दर करोड़ों लहरें प्यार की अपने आप ही उत्पन्न हो जाती हैं -

चरन सरन गुरु एक पैंडा जाइ चल,
सतिगुरु कोटि पैंडा आगे होइ लेत है।

कबि्त भाई गुरदास जी

रूहानियत अथवा आत्म मार्ग का सारा ही खेल प्यार का है -

जिनि प्रेम कीओ तिन ही प्रभ पाइओ। ***पा: 10***

क्योंकि वह वाहिगुरू स्वयं प्यार रूप होकर सृष्टि में शोभायमान हो रहा है -

जत्र तत्र दिसा विसा हुइ फैलिओ अनुराग॥

जापु साहिब

अब यदि परमात्मा या अकालपुरुष प्यार रूप होकर चहुंओर फैला हुआ है तो उसे प्यार करने वाले भी प्यार का सागर ही होते हैं। इन प्यार वाली ईश्वरीय आत्माओं को 'हरिजन' शब्द के साथ गुरवाणी में सम्मानित किया गया है। 'हरिजन' पद तक पहुँचने के लिए हमें कई पड़ावों में से गुजरना पड़ता है। यह रास्ते या पड़ाव सरल भी बहुत हैं, समतल व नरम भी बहुत हैं, लेकिन साथ ही साथ ऊँचे-नीचे व सख्त भी बहुत हैं। यदि समर्थ सतगुरू की कृपा हो जाए, यदि कर्मकाण्ड में प्रवेश करके उसकी कृपा के पात्र बन जाएँ तो फिर यह मार्ग आसान व सरल है लेकिन बिना सतगुरू की कृपा के यह मार्ग कठिन भी बहुत बन जाता है। इस आत्म मार्ग की सीढ़ी के कई डण्डे हैं, पड़ाव हैं -

संत का मारगु धरम की पउड़ी को वडभागी पाए ॥

अंग - 622

हमने सीढ़ी-दर-सीढ़ी चढ़ना है, श्रद्धा भावना, प्यार व वैराग्य रूपी कदम आगे बढ़ाने हैं। कोई भी जिज्ञासु इस आत्म मार्ग के डण्डों पर चढ़ता हुआ अनेकों पड़ावों में से गुजरता है। पावन गुरवाणी के अनुसार सबसे पहले जिज्ञासु अपने आप में नम्रता धारण करते हुए कुछेक प्रतिशत आत्म-समर्पण करता है भावार्थ स्वयं को गुरू के हवाले करता है लेकिन अभी दिल्ली दूर ही होती है, मंजिल-ए-मकसूद तक पहुँचने के लिए शत प्रतिशत आत्म समर्पण की जरूरत होती है। इस आत्मिक अवस्था तथा आत्म मार्ग को भक्त कबीर जी गुरवाणी में इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

कबीर रोड़ा होइ रहु बाट का
तजि मन का अभिमानु॥
ऐसा कोई दासु होइ ताहि मिलै भगवानु ॥

अंग - 1372

इसके शाब्दिक अर्थ हैं कि यदि तुम परमात्मा को मिलना चाहते हो तो फिर तुम रोड़े जैसे हो जाओ यानि कि प्रत्येक राहगीर की ठोकरों को सहन करो भावार्थ अपने अहंकार का त्याग कर दो तब कहीं जाकर परमात्मा का मिलाप सम्भव है। लेकिन भक्त कबीर जी इस सीढ़ी के अगले डण्डे पर चढ़ने के लिए अगला कदम इस प्रकार से बढ़ाने के लिए फुरमान करते हैं -

कबीर रोड़ा हूआ त किआ भइआ
पंथी कउ दुखु देइ ॥
ऐसा तेरा दासु है जिउ धरनी महि खेह ॥

अंग - 1372

रोड़ा बनने से अभी मंजिल की प्राप्ति नहीं हुई है। यदि रोड़ा, रागहीरों की ठोकरों को सहारता है तो दूसरा पक्ष यह है कि वह राहगीरों को चुभता भी है, भावार्थ किसी को भी दुख नहीं देता है। भक्त या जिज्ञासु तो इतना नरम दिल वाला होना चाहिए जैसे कि धरती की धूल होती है।

भक्त जी कहते हैं कि आत्मिक ऊँचाई का मार्ग अभी भी लम्बा है, यहाँ पर भी मंजिल-ए-मकसूद नहीं मिल सकी

है। इसके बाद आप पुनः समझाते हैं कि -

कबीर खेह हूई तउ किआ भइआ
जउ उडि लागै अंग ॥
हरि जनु ऐसा चाहीऐ जिउ पानी सरबंग ॥

अंग - 1372

लेकिन कबीर जी कहते हैं कि धूल रूप होकर भी वह अभी परमात्मा के द्वार पर पहुँच नहीं पाता है क्योंकि यह धूल तो राहगीरों के अंगों पर उड़-उड़ कर लगती है ।

इसके आगे पुनः आप धूल रूप हो जाने की अवस्था को रद्द करते हुए जिज्ञासु को और अधिक नम्रता धारण करने की तागीद करते हैं कि अभी भी कुछ कमी रह गई है अतः इससे भी आगे बढ़ना पड़ेगा अर्थात जिज्ञासु को पानी जैसा होना चाहिए क्योंकि पानी का यह गुण है कि उसे जिस प्रकार के भी बर्तन में डालो वह उसी प्रकार के रूप को धारण कर लेता है यानि कि वह सरबंग है। लेकिन भक्त जी कहते हैं कि अभी भी पूर्णता नहीं है। भक्त के अधूरेपन को गुरवाणी प्रदर्शित कर रही है -

कबीर पानी हूआ त किआ भइआ सीरा ताता होइ॥
हरि जनु ऐसा चाहीऐ जैसा हरि ही होइ ॥

अंग - 1372

पानी की भांति सबके साथ मिल जाने वाले स्वभाव के द्वारा भी अभी पूर्णता प्राप्त नहीं हुई है पानी भी कभी गर्म व कभी ठंडा होता है। जिज्ञासु या भक्त जन तो ऐसा होना चाहिए जैसा कि स्वयं परमात्मा ही है। परमात्मा जैसी पूर्णता होनी चाहिए। रोड़ा, धूल व पानी आदि के प्रमाण देकर कबीर जी ने हमें समझाने की कोशिश की है कि ठीक है प्रभु प्राप्ति के लिए सद्गुणों का होना बहुत आवश्यक है क्योंकि -

विणु गुण कीते भगति न होइ ॥ *अंग - 4*

भले ही ये सद्गुण उसके मिलाप में सहायक तो हैं लेकिन ये मंजिल नहीं हैं। ये पड़ाव तो हो सकते हैं, मंजिल नहीं। अतः अन्त में, सांसारिक चीजों की तुलना में प्राप्ति को समझ लेना पूर्णता नहीं है। पूर्णता के लिए तो उस परमात्मा जैसा ही होने की आवश्यकता है -

हरि जनु ऐसा चाहीऐ जैसा हरि ही होइ ॥

अंग - 1372

जो कार्य परमात्मा के हैं, वही कार्य उस 'हरिजन' के भी होंगे। दयावान, कृपावान, परोपकारी, बख्शनहार आदि गुण परमात्मा के हैं और ये सभी गुण हरिजन में भी होने चाहिए। वास्तव में वे हरिजन मूलमन्त्र में प्रकट अकालपुरुष के स्वरूप के गुणों के धारणी हो जाते हैं। मूल मन्त्र को जपकर व उसके साथ जुड़कर वे स्वयं निर्भय व निरवैर शक्तियों के मालिक हो जाते हैं। सम्पूर्ण सिक्ख इतिहास इस अवस्था की गवाही देता है तथा व्यवहारिक रूप में इसकी तसदीक करता है। सिक्ख इतिहास के अन्दर गुरसिक्खों ने इस रूहानी आत्मिक अवस्था को जिया है यानि कि अपने अनुभव में इसे प्राप्त किया है। यही इस सिद्धान्त को व्यवहारिक रूप में प्रकट करता है। गुरमति मार्ग ही आत्म मार्ग है। इस आत्म मार्ग पर चलने वालों को आत्मदर्शी कहा जाता है। उनके सारे जीवन में से भी 'हरिजन' अवस्था की सुगन्ध चौगिरदे को सुगन्धित करती रहती है। सुगन्ध भरा जीवन भावी पीढ़ियों के लिए प्रकाश स्तम्भ बन जाता है। इसी प्रकार का जीवन था रतवाड़ा साहिब वाले महापुरुषों व उनकी जीवन संगिनी सम्माननीया माता जी का। उनका सारा ही जीवन बचपन से लेकर शरीर के अन्तिम श्वास तक प्रेरणादायक ही रहा है। आज भी उन्हें याद करके उनके जीवन में निहित उत्साह, प्यार व वैराग्य अपने आप ही हमें उस मंजिल की तरफ बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। यही प्रेरणा व यही आकर्षण हमारी उन्नति का एक सहारा है। उनकी याद व प्यार भरे आकर्षण में रतवाड़ा साहिब की पावन धरती पर चार दिवसीय गुरमति रूहानी समागम हो रहे हैं। प्रबन्ध कार्यों को सुव्यवस्थित रूप देने के लिए एक मीटिंग हो चुकी है। प्यार वाले जिज्ञासुजन, सेवा व सिमरन के इस चार दिवसीय कुम्भ में डुबकियाँ लगाने के लिए, अत्यन्त उत्सुक होकर देश विदेशों से तशरीफ ला रहे हैं। गुरू प्यार वाली संगत के आने के सम्बन्ध में अग्रिम सूचना हमारे लिए प्रबन्ध कार्यों के सन्दर्भ में अत्यन्त सहायक सिद्ध होती है। ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब के वर्तमान मुखी सन्त बाबा लखबीर सिंह जी तथा ट्रस्ट के समस्त सदस्यों की तरफ से आप सबको इस गुरमति समागम में तशरीफ लाने के लिए हार्दिक निवेदन किया जाता है। इस महान गुरमति समागम सम्बन्धी सभी तैयारियाँ दिन रात चल रही हैं। प्रत्येक प्रबन्ध का जायजा वर्तमान मुखी सन्त बाबा लखबीर सिंह जी अपने सहयोगी सदस्यों के साथ मिलकर स्वयं कर रहे हैं ताकि गुरु प्यार में आने वाली संगत को कोई मुश्किल न आ सके। दोबारा फिर विनती है कि आप सभी श्रद्धालुजन आकर हमें अपने दर्शनों द्वारा अनुग्रहीत करने की कृपा करें।

कतिक होवै साध संगु बिनसहि सभे सोच।।

(कतिक माह की संक्रान्ति - 17 अक्टूबर, 2018 दिन बुद्धवार)

(डा.) जगजीत सिंह

बारह माहा माँझ महला ५ घरु ४

कतिकि करम कमावणे दोसु न काहू जोगु ॥
परमेसर ते भुलिआँ विआपनि सभे रोग ॥
वेमुख होए राम ते लगनि जनम विजोग ॥
खिन महि कउड़े होइ गए जितड़े माइआ भोग ॥
विच न कोई करि सकै किस थै रोवहि रोज ॥
कीता किछू न होवई लिखिआ धुरि संजोग ॥
वडभागी मेरा प्रभ मिलै ताँ उतरहि सभि बिओग ॥
नानक कउ प्रभ राखि लेहि मेरे साहिब बंदी मोच ॥
कतिक होवै साधसंगु बिनसहि सभे सोच ॥

अंग - *135*

पदार्थ - कतिकि = कार्तिक माह की ठंडी ऋतु, काहू जोग = किसी दूसरे के जिम्मे, किसी दूसरे के माथे, विआपनि = जोर डाल लेते हैं, राम ते = भगवान से, लगनि जनम विजोग = जन्म-जन्मांतरों से बिछुड़े हुए, लम्बे बिछोड़े के, माइआ भोग = माया की मौजें, इन्द्रियों के रस, ऐशो आराम, विचु न कोई करि सकै = कोई बिचौलिया नहीं बन सकता है, कोई सहायता नहीं कर सकता है, किस थै = और किसके पास, रोवहि रोज = रोज-रोज किसके पास जाकर रोएँ, फरियाद करें, कीता = अपना किया हुआ, धुरि = धुर दरगाह से, परमात्मा की हुजूरी से, बिओग = वियोग, बिछोड़े के दुख, बंदी मोच = हे बन्धन काटने वाले, बन्धनों से मुक्त करने वाले, बिनसहि = नष्ट हो जाते हैं, सोच = चिन्ता, फिक्र।

कतिकि करम कमावणे दोसु न काहू जोगु ॥
परमेसर ते भुलिआँ विआपनि सभे रोग ॥

सरलार्थ - कार्तिक माह की सुहावनी ऋतु में भी यदि प्रभु पति से बिछोड़ा बना रहा और फलस्वरूप जीवन में दुख या संकट आते रहे तो ऐसा अपने पूर्वजन्म के कर्मों की कमाई के कारण ही होता है, यानि कि इसका दोष अन्य किसी को नहीं दिया जा सकता है। यह अटल सच्चाई है कि परमेश्वर को विस्मृत कर देने से, भूल जाने से, मनुष्य को कई प्रकार के शारीरिक तथा मानसिक रोग आ घेरते हैं।

व्याख्या - संसार का सारा खेल कर्मों व प्रतिकर्मों का ही खेल है। मनुष्य जो बोता है, वही काटता है। हम अपने द्वारा किए गए कर्मों का ही फल भोगते हैं। यह दैवी या ईश्वरीय कानून है। यदि किसान बबूल के बीज बोकर उन्हें अंगूरों का फल लगने की उम्मीद रखे अथवा कातने के लिए तो हाथ में ऊन लिए हो और उम्मीद रेशमी वस्त्र पहनने की करे तो यह तो उसकी निरोल मूर्खता ही होगी -

फरीदा लोड़ै दाख बिजउरीआँ किकरि बीजै जटु ॥
हंढै उंन कताइदा पैधा लोड़ै पटु ॥ ***अंग -*** *1379*

कर्म तो हमारे पैरों की जंजीरें हैं। कर्मों का फल भोगने के लिए मनुष्य को बार-बार जन्म लेना पड़ता है और बार-बार मरना पड़ता है तथा चौरासी लाख योनियों का चक्र समाप्त ही होने को नहीं आता है। कई बार बाप, कई बार बेटा, कई जन्म गुरु, कई जन्म चेला इसे बनना पड़ता है और इन जन्मों की गिनती नहीं की जा सकती है -

1. ***जुड़ि जुड़ि विछुड़े विछुड़ि जुड़े ॥***
जीवि जीवि मुए मुए जीवे ॥
केतिआ के बाप केतिआ के बेटे केते गुर चेले हूए ॥
आगै पाछै गणत न आवै किआ जाती किआ हुणि हूए॥
अंग - *1238*

2. ***जमि जमि मरै मरै फिरि जंमै ॥***
बहुतु सजाइ पइआ देसि लंमै ॥
जिनि कीता तिसै न जाणी अंधा
ता दुखु सहै पराणीआ ॥ ***अंग -*** *1020*

इसलिए इस जन्म में मिले सुखों व दुखों के लिए दूसरों के जिम्मेदार ठहराना उचित नहीं है, यदि दोष देना ही है तो अपने कर्मों को दो, अपने आप को दो क्योंकि जो हम कर्म करते हैं, उसी का हम फल भी भोगते हैं -

ददै दोसु न देउ किसै दोसु करंमा आपणिआ ॥
जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना॥
अंग - *433*

श्री जपु जी साहिब की बाणी के अन्दर श्री गुरु नानक

देव जी स्पष्ट शब्दों में बताते हैं कि अच्छे व बुरे कर्म, पुण्य तथा पाप ये केवल कहने मात्र के लिए नहीं हैं यानि कि इन्हें केवल साधारण बातें ही मत समझो। दरअस्ल मनुष्य जो-जो कर्म करता है अन्तःकरण में उनकी छाप लगती जाती है अर्थात अन्दर सब कुछ लिखा जाता है और जिन्दगी का इस प्रकार का सारा रिकार्ड मरणोपरान्त मनुष्य की जीवात्मा के साथ जाता है और उसके द्वारा किए गए पिछले जन्मों के कर्म तथा नए किए गए कर्म, मनुष्य की तकदीर का रूप धारण करते हैं -

पुंनी पापी आखणु नाहि ॥ करि करि करणा लिखि लै जाहु॥ आपे बीजि आपे ही खाहु ॥ नानक हुकमी आवहु जाहु ॥ ***अंग -*** *4*

श्री गुरु अरजन देव जी इस दैवी हुक्म पर अपनी मोहर लगाते हुए फुरमान करते हैं कि सारा संसार अच्छे व बुरे कर्मों के खेल में लिप्त है। परमेश्वर के साथ जुड़ा हुआ कोई विरला भक्त ही इस खेल से निर्लिप्त रह सकता है -

दुक्रित सुक्रित मंधे संसारु सगलाणा ॥
दुहहूं ते रहत भगतु है कोई विरला जाणा ॥ अंग - *51*

श्री जपुजी साहिब जी की चौवीसवीं पउड़ी में धर्म खण्ड के बारे में बताते हुए श्री गुरु नानक देव जी कथन करते हैं कि यह धरती पुण्य कमाने के लिए धर्मशाला के तौर पर स्थापित की गई है, जिसमें अनेकों प्रकार के जीव अपने अच्छे व बुरे कर्मों के माध्यम से क्रियाशील हो रहे हैं। प्रभु जी के सच्चे दरबार में उनके सच्चे व कच्चे कर्मों का लेखा-जोखा होता है -

राती रुती थिती वार ॥ पवण पाणी अगनी पाताल ॥ तिसु विचि धरती थापि रखी धरम साल ॥ तिसु विचि जीअ जुगति के रंग ॥ तिन के नाम अनेक अनंत ॥ करमी करमी होइ वीचारु ॥ सचा आपि सचा दरबारु॥ तिथै सोहनि पंच परवाणु ॥ नदरी करमि पवै नीसाणु॥ कच पकाई ओथै पाइ ॥ नानक गइआ जापै जाइ ॥
अंग - *7*

मनुष्य कर्मों के चक्रव्यूह में किस प्रकार से फँसता है तथा इसमें से कैसे निकला जा सकता है, यह एक बहुत ही गम्भीर प्रश्न है जिसका समाधान गुरवाणी करती है और इसका जिक्र कार्तिक माह के प्रथम वाक्य में ही प्राप्त हो जाता है -

परमेसर ते भुलिआँ विआपनि सभे रोग ॥

सारे दुखों का कारण परमेश्वर को भूल जाना है तथा सारे दुखों का इलाज उसकी याद को हृदय में बसा लेना है। यह जीव प्रभु जी को विस्मृत करके 'हउमै' यानि कि मैं व मेरी के संसार को अपने हृदय में बसा लेता है। हउमै = हउ + मैं, यानि कि मेरा घर-बार, मेरी पद-प्रतिष्ठा, मेरी जायदाद, मेरे सगे-सम्बन्धी, मेरे सज्जन-दुश्मन, मेरा लेन-देन, लड़ाई-झगड़े आदि, और इस प्रकार से सारा जीवन अच्छे व बुरे कर्मों में, दुखों व सुखों में व्यतीत हो जाता है तथा एक लम्बा जन्म-मरण का चक्रव्यूह शुरू हो जाता है। गुरुवाक्य है -

बैर बिरोध काम क्रोध मोह ॥ झूठ बिकार महा लोभ धोह ॥
इआहू जुगति बिहाने कई जनम ॥
नानक राखि लेहु आपन करि करम ॥ ***अंग -*** *267*

हउमै में क्रियाशील मनुष्य अनेकों योनियों में भटकता रहता है -

हउमै एहा जाति है हउमै करम कमाहि ॥
हउमै एई बंधना फिरि फिरि जोनी पाहि ॥अंग - *466*

महापुरुष इन कर्मों की तीन किस्में बताते हैं - संचित कर्म, प्रारब्ध कर्म तथा क्रियामान कर्म। 'परमेसर ते भुलिआ' यानि जिन्होंने परमेश्वर को विस्मृत कर दिया है और जो अज्ञानता में भटकते हुए जीवों के सारे कर्मों के बीज अन्तःकरण में जमा होते रहते हैं, वे जन्म के समय प्रारब्ध कर्म बनकर जीव की पूँजी के तौर पर ही प्राप्त होते हैं तथा इन कर्मों को अवश्य ही भोगना पड़ता है -

लेखु न मिटई हे सखी जो लिखिआ करतारि ॥
अंग - *937*

'संचित कर्म' बिना भोगे हुए कर्मों का खजाना है जो समय की प्रतीक्षा में रहते हैं, इनका भुगतान कई-कई जन्मों में हो पाता है, 'क्रियामान कर्म' हमारे नित्य प्रतिदिन के कर्म होते हैं, जो संचित रूप में होते हैं तथा क्रियाशील होने के लिए प्रतीक्षारत रहते हैं। ये कर्म नवजन्म धारण करने पर प्रारब्ध रूप में क्रियाशील होते हैं। यहाँ तक कि मनुष्य का हउमै से छुटकारा, गुरु के साथ मिलाप, अज्ञानता का विनाश व जीवन पद की प्राप्ति भी कर्मों के अनुसार प्रारब्ध मुताबिक ही होती है -

पूरब करम अंकुर जब प्रगटे भेटिओ
पुरखु रसिक बैरागी ॥ मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक जनम जनम की सोई जागी॥ ***अंग -*** *204*

गुरवाणी के अनुसार गुरु के साथ मिलाप भी धुर से लिखे गए भाग्यों के अनुसार ही होता है -

जिन मसतकि धुरि हरि लिखिआ
तिना सतिगुरु मिलिआ राम राजे ॥

अगिआनु अंधेरा कटिआ गुर गिआनु घटि बलिआ ॥
अंग - 450

वेमुख होए राम ते लगनि जनम विजोग ॥
खिन महि कउड़े होइ गए जितड़े माइआ भोग ॥

जिन प्राणियों ने इस जन्म में परमात्मा की याद की तरफ से अपने मुंह को मोड़े रखा है, उन्हें फिर लम्बे बिछोड़े पड़ जाते हैं। प्रभु जी को भूलकर पदार्थों के भोगों में मनुष्य प्रसन्नता की तलाश करता है लेकिन अन्तिम समय में यह खुशी एक पल भर में ही दुखदायी हो जाती है, विष रूप धारण कर लेती है।

व्याख्या - माया के भोगों से मनुष्य क्षणिक प्रसन्नता तो ले सकता है लेकिन उसे वास्तविक प्रसन्नता हासिल नहीं हो सकती है, जिस सुख ने पल भर में ही दुखों में बदल जाना है, वह सुख कैसा? मनुष्य विषयों को नहीं भोगता है, अपितु विषय मनुष्य को भोगते हैं। अफीम खाने का आदी अमली सोचता है कि वह अफीम खाता है लेकिन वास्तव में तो अफीम उसे खा रही है। शराबी, शराब को नहीं पीता बल्कि शराब उसी को पी जाती है -

कामु क्रोधु काइआ कउ गालै ॥
जिउ कंचन सोहागा ढालै ॥ *अंग - 932*

गुरवाणी के अनुसार अनेकों मायिक पदार्थों के भोग तथा सुख स्वरूप महल व कोठियां, मोती-हीरे, मन इच्छित वस्तुएं प्रभु जी को विस्मृत कर देने वाली वस्तुएँ मात्र हैं। इन्हें भोग कर मन में कभी भी धैर्य नहीं रहता है, न ही सुख-शान्ति प्राप्त होती है बल्कि पापों का गट्ठर और भी भारी होता जाता है। सुख, शान्ति, सहजता, आनन्द, प्रभु की याद व नाम स्मरण में से ही प्राप्त होना है जो कि सुखों का श्रोत है -

विच न कोई करि सकै किस थै रोवहि रोज ॥
कीता किछू न होवई लिखिआ धुरि संजोग ॥

मनुष्य द्वारा अपने किए गए कर्मों के अनुसार प्राप्त दुखद हालत में किसी के पास रोना, रोने का क्या लाभ है? कोई दूसरा व्यक्ति उसे किए गए कर्मों के फल से बचा नहीं सकता है। धर्मराज के दरबार में कोई भी मध्यस्थ उसे कर्मगति से छुटकारा नहीं दिला सकता है और न ही उसके दरबार में कोई सिफारिश ही चलती है तथा न ही कोई रिश्वत -

ओथै सचे ही सचि निबड़ै चुणि वखि कढे जजमालिआ ॥
थाउ न पाईन कूड़िआर मुह कालै दोजकि चालिआ॥
अंग - 463

किए गए कर्मों के अनुसार, जो धुर दरगाह से ही प्रभु जी की हुजूरी से संयोग लिखे जाते हैं, उसे कोई भी टाल नहीं सकता है, लेकिन निराश होने वाली कोई बात नहीं है। प्रभु जी के हुक्मानुसार हुई रचना में प्रत्येक दुख का दारू भी प्राप्त है। गुरवाणी हमें सही मार्ग-दर्शन भी प्रदान करती है और दुख भी दवा बन जाता है। जब यह मनुष्य-मन, सांसारिक प्राप्तियों में से सुख की तलाश करता हुआ थक जाता है तो वह सुखों के सच्चे श्रोत परमात्मा की तरफ रुख करता है, साधुओं की संगत प्राप्त करने की कोशिश करता है, नाम वाणी के साथ जुड़ता है जो कि सुख सहज व आनन्द का श्रोत है -

वडभागी मेरा प्रभ मिलै ताँ उतरहि सभि बिओग॥
नानक कउ प्रभ राखि लेहि मेरे साहिब बंदी मोच॥
कतिक होवै साधसंगु बिनसहि सभे सोच ॥

यदि अच्छे कर्मों की बदौलत प्रभु दयालु होकर अपना मिलाप स्वयं प्रदान कर दे तो फिर बिछोड़े के कारण उत्पन्न हुए सारे दुख, संताप, क्लेश समाप्त हो जाते हैं। श्री गुरु नानक देव जी विनती करते हैं कि हे माया के बन्धनों से छुड़ाने वाले मेरे स्वामी! हमें माया के मोह से बचा लो। अपनी दया व कृपा के द्वारा हमें अपनी शरण में ले लो और हमारा सहारा बन कर हमें जन्म मरण के चक्रव्यूह तथा कर्म बन्धन से मुक्त कर दो।

अपना निर्णय देते हुए श्री गुरु जी हमारा मार्ग दर्शन करते हुए फुरमान करते हैं कि कार्तिक की सुहावनी ऋतु में अच्छे भाग्यों की बदौलत यदि साधुओं की संगत, साधुजनों की संगत, नाम अभ्यासी गुरु प्यारों की संगत प्राप्त हो जाए तो प्रभु जी के बिछोड़े से उत्पन्न सारे दुख, संताप, चिन्ताएं व उदासियां दूर हो जाती हैं तथा मिलाप का आनन्द, सुख व सहज प्राप्त हो जाता है।

जहाँ पर साधु संगत एकत्र होती है वह स्थान नाम स्मरण की आभा से पावन हो जाता है, जहाँ पर सच्चे साहिब का यशगान होता है, वहाँ पर लोक मनों में से मन्द भावनाओं का नाश हो जाता है क्योंकि पारब्रह्म परमेश्वर पतितों को पावन करने वाला, बुरे संचित कर्मों के लेखे को मिटा देने वाला, कृपालु पिता है और ऐसा उसका स्वभाव ही है। संचित कर्मों को समाप्त करने का एकमात्र साधन सत्संगत है, धुर की सच्ची वाणी का कीर्तन व नाम अभ्यास है।

गुरु प्यारे भक्तजनों की संगत में साहिब स्मरण हो आता है, मन नाम-वाणी में टिक जाता है, मन की मैल धुल जाती है तथा निर्मल मन, नाम-रस में मुग्ध हो जाता है, जिसके

कारण आनन्द की स्थिति उत्पन्न होती है। ऐसा गुरवाणी का निर्णय है -

आवै साहिबु चिति तेरिआ भगता डिठिआ ॥
मन की कटीऐ मैलु साधसंगि वुठिआ ॥ अंग - 520

इसलिए कार्तिक माह में साधु संगत में आकर गुरवाणी नाम स्मरण अभ्यास में जुड़कर सारे दुखों एवं चिन्ताओं से मुक्त होना चाहिए -

कतिक होवै साधसंगु बिनसहि सभे सोच ॥

राग माझ में तथा राग तुखारी में रचित श्री गुरु अरजन देव जी के बारहमाहा में से कार्तिक महीने का पाठ व उसकी सरल व्याख्या -

कतकि किरतु पइआ जो प्रभ भाइआ ॥
दीपकु सहजि बलै तति जलाइआ ॥
दीपक रस तेलो धन पिर मेलो धन ओमाहै सरसी ॥
अवगण मारी मरै न सीझै गुणि मारी ता मरसी ॥
नामु भगति दे निज घरि बैठे अजहु तिनाड़ी आसा ॥
नानक मिलहु कपट दर खोलहु एक घड़ी खटु मासा॥
अंग - 12

कतकि किरतु पइआ जो प्रभ भाइआ ॥
दीपकु सहजि बलै तति जलाइआ ॥

कार्तिक के महीने में जिस प्रकार से किसान धान व मक्का यानि कि खरीफ की फसल को काट कर घर लेकर आता है उसी प्रकार से मनुष्य अपने द्वारा किए गए कर्मों के फलों को एकत्र किए गए संस्कारों के रूप में प्राप्त करता है (किरतु पइआ)। हम सब जीव, मनसा वाचा कर्मणा, कई जन्मों से कर्म करते आ रहे हैं और इसीलिए परमात्मा के हुक्मानुसार, उसके नियमानुसार (प्रभ भाइआ) प्रत्येक कर्म का प्रतिकर्म हो रहा है। कई जन्मों से हम यही क्रम करते आ रहे हैं तथा उनके प्रतिकर्म व संस्कारों के रूप में प्राप्त कर रहे हैं। संस्कार हमें अगले कर्मों के लिए प्रेरित करते हैं और यह चक्र चलता ही रहता है। केवल गुरु-कृपा के द्वारा ही यह दोष-चक्र टूट सकता है। गुरवाणी का फुरमान है-

बैर बिरोध काम कोध मोह॥
झूठ बिकार महा लोभ धोह॥
इआहू जुगति बिहाने कई जनम॥
नानक राखि लेहु आपन करि करम॥ अंग - 268

जो मनुष्य गुरू कृपा का पात्र बन जाता है, उसके अन्दर स्थिरता आ जाती है, उसके हृदय में आत्मिक प्रकाश प्रदान करने वाला दीपक जगमगा उठता है। गुरू ने आत्मिक तत्व की समझ प्रदान की, प्रभु पहचान की कृपा की और अन्दर प्रकाश हो गया, बुझा दीपक जग पड़ा (दीपक सहिज बलै तति जलाइआ)। इस अवस्था में जीव रूपी स्त्री को प्रभु रूपी पति का मिलाप प्राप्त हो गया (धन पिर मेलो) फलस्वरूप हृदय रस से भर गया और आत्मिक आनन्द में खिल गया। जिस प्रकार से तेल मिलने पर दीपक की रौशनी बढ़ जाती है, उसी प्रकार से जीव उत्साह भरपूर होकर आत्मिक आनन्द को जीता है तथा उसका चित्त दिव्य उल्लास से भर जाता है। (धन ओमाहै सरसी)।

दीपक रस तेलो धन पिर मेलो धन ओमाहै सरसी॥
अवगण मारी मरै न सीझै गुणि मारी ता मरसी ॥

जिस जीव रूपी स्त्री को विकारों ने घेरा हुआ है और उसे मरणासन्न ही कर रखा है तो उसका शरीर समझो मृत ही हो चुका है, यानि कि वह आत्मिक तौर पर मर चुकी है (अवगण मारी मरै) वह जिन्दगी के रहस्य को जान नहीं सकती है और आत्मिक समझ से पूर्णतः खाली होती है (न सीझै) लेकिन इसके विपरीत जिस जीव रूपी स्त्री ने प्रभु जी के यशगान के फलस्वरूप विकारों का दमन कर लिया है, वह विकारों से बच निकलती है तथा प्रभु मिलाप के योग्य हो जाती है (गुणि मारी ता मरसी)।

नामु भगति दे निज घरि बैठे अजहु तिनाड़ी आसा
नानक मिलहु कपट दर खोलहु एक घड़ी खटु मासा॥१२॥

गुरु जी फुरमान करते हैं कि जिन जीवों पर कृपा करके प्रभु अपने नाम की कृपा प्रदान कर देता है भाव अपनी भक्ति प्रदान कर देता है, वे विकारों की तरफ नहीं भटकते हैं बल्कि हृदय रूपी निजघर में टिके रहते हैं तथा उनके अन्दर सदैव ही प्रभु मिलाप की लालसा बनी रहती है (नामु भगति दे निजघरि बैठे अजहु तिनाड़ी आसा) वे सदैव यही विनती करते हैं कि हे सच्चे पातशाह! हमें अपने दीदार दें, अपना मिलाप दें और हमें आकर मिलें (मिलहु) हमारे अन्दर से बिछोड़ा डालने वाले द्वारों को खोल दो (कपट दर खोलहु) क्योंकि आपके साथ हमारा जो बिछोड़ा है, वह बरदाश्त से बाहर है। आपका एक घड़ी का बिछोड़ा तो हमें छः महीने के बिछोड़े की भांति प्रतीत होता है (एक घड़ी खटु मासा)। जागरूक इन्सान परमात्मा की याद की तरफ से एक घड़ी का बिछोड़ा भी सहन नहीं कर सकता है -

आखा जीवा विसरै मरि जाउ॥ अंग - 9

बिनु हरि भजन नाही छुटकारा।।

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मि. चै. ट्रस्ट

सतिनामु श्री वाहिगुरु,
धंन श्री गुरु नानक देव जीओ महाराज।
डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ॥
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥
अंग - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ॥
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥
अंग - 289

जैसा बालकु भाइ सुभाई लख अपराध कमावै ॥
करि उपदेसु झिड़के बहु भाती
बहुड़ि पिता गलि लावै ॥
पिछले अउगुण बखसि लए प्रभु आगै मारगि पावै ॥
अंग - 624

धारना - बिनाँ हरि भगत नहीं छुटकारा,
काहतों मनाँ भुलिआ फिरें।

वडे वडे जो दीसहि लोग ॥
तिन कउ बिआपै चिंता रोग ॥ 1 ॥
कउन वडा माइआ वडिआई ॥
सो वडा जिनि राम लिव लाई ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
भूमीआ भूमि उपरि नित लुझै ॥
छोडि चलै त्रिसना नही बुझै ॥ 2 ॥
कहु नानक इहु ततु बीचारा ॥
बिनु हरि भजन नाही छुटकारा ॥ अंग - 188

साधु संगत जी! अपनी चित्त वृत्तियों को एकाग्र करते हुए उच्च स्वर में बोलो, सतिनाम श्री वाहिगुरू जी! अपने-अपने कारोबारों को विराम देते हुए आप सभी लोग गुरु दरबार में पहुँचे हो। गुरू जी का फुरमान है 'कहु नानक इहु ततु बीचारा।।' तत्व विचार उसे कहते हैं जो कि बहुत अधिक सोच विचार व जाँच परख करने के बाद प्राप्त किया गया हो और वह तत्व विचार है - 'बिनु हरि भजन नाही छुटकारा।।' यानि भजन बन्दगी करने के बिना हमारा छुटकारा हो पाना नामुमकिन है। अब यदि कोई व्यक्ति भजन-बन्दगी नहीं करता है तो होता यह है कि जीवन को तो वह व्यक्ति व्यतीत कर जाता है और बहुत सारे कार्य भी कर जाता है। लेकिन अपने द्वारा किए गए उन्हीं कर्मों का बँधा हुआ वह बार-बार संसार में चक्कर लगाता रहता है। फलस्वरूप योनियों के चक्रव्यूह में पड़कर भयंकर दुख भोगता है -

कई जनम भए कीट पतंगा ॥
कई जनम गज मीन कुरंगा ॥
कई जनम पंखी सरप होइओ ॥
कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ ॥ 1 ॥ अंग - 176

इस प्रकार से उसे कोई पक्का ठिकाना प्राप्त नहीं हो पाता है। बड़ी मुश्किल बन जाएगी यदि यह मनुष्य पशु बन जाए तांगे का घोड़ा बन जाए, सारा दिन डंडे ही खाता रहे, अथवा अन्य प्रकार की निषिद्ध योनियों में चला जाए। योनियों में जाकर भी फल भोगने पड़ते हैं।

बाबा साहिब सिंह महाराज जी बेदी ऊना साहिब वाले, जो कि गुरू नानक देव जी के वंशजों में से ग्यारहवें स्थान पर थे, आप जी साहनेवाल आए हुए थे। महाराजा रणजीत सिंह जी का वह समय था उस समय साहनेवाल का जो राजा था, उसका नाम सुध सिंह था। जब उसे पता चला कि महापुरुष आए हुए हैं तो वह सम्मान हेतु दर्शन करने आता है। अतः वह महापुरुषों के पास आ जाता है लेकिन वह हाथी पर चढ़ कर आया। जिस समय उसने आकर महापुरुषों को नमस्कार की तो वे कहने लगे, सुध सिंह! तुम इस हाथी पर न चढ़ा करो। दरअस्ल साधू के मन में प्राणिमात्र का भला ही निहित होता है। वे जो वचन किया करते हैं वे बहुत सहज स्वभाव हुआ करते हैं। वे बनाए हुए नहीं होते हैं, बस जो हो गए तो हो गए, चाहे अच्छे हो गए और चाहे बुरे हो गए। वे व्यर्थ नहीं जाया करते हैं। उस वक्त राजा सुध सिंह ने विनती की कि महाराज जी! क्या इस हाथी में कोई दोष है? मुझे तो यह ज्ञान हो गया है, मुझे आपके दर्शनार्थ अत्यन्त श्रद्धा भावना से चलकर आना चाहिए था, जिसके फलस्वरूप मेरे बुरे कर्मों का बोझ कम होता और अच्छे कर्मों का उत्पन्न होता, जैसे कि मैं प्रायः महापुरुषों से सुनता रहता हूँ कि साधू

की तरफ यदि कोई श्रद्धाभावना से आता है तो उसे एक-एक कदम पर एक-एक अश्वमेघ यज्ञ का फल प्राप्त होता है। ठीक है मैं हाथी पर चढ़कर आ गया हूँ लेकिन महाराज जी आपके कहने से मेरे मन में शंका उत्पन्न हो गई है। आप कृपा करके मेरे संशय को दूर करो ताकि मेरा मन मान जाए और मैं इस हाथी पर न चढ़ूँ। वैसे मैं आपका दास हूँ, इसलिए कोशिश करूँगा कि मैं इस हाथी पर न चढ़ूँ। महाराज जी! वैसे मैं इसे बाराबंकी से, नेपाल के जंगलों में से लाया था उसके बाद मैंने इसे बहुत उम्दा किस्म का प्रशिक्षण दिलवाया। मेरे साथ यह युद्धों में भी गया है और बहुत कुशलता से मुझे यह युद्धों में से निकाल भी लाता है। यदि अन्य कोई रहस्य की बात है तो फिर आप कृपा करके बतलाने की कृपा करो क्योंकि मेरे मन में भी एक शंका सा उत्पन्न हो गया है। महात्मा जी कहने लगे, यह तुम्हारी जान का दुश्मन है। यदि तुम्हें यह युद्धों में से बाहर निकाल लाया है तो यह एक अलग विषय हो सकता है लेकिन यह तुमसे बदला लेना चाहता है।

सुध सिंह बोला, महाराज जी! मुझसे ऐसा क्या कोई गुनाह हो गया है? मुझसे क्या गलती हुई है जिसका यह बदला लेना चाहता है?

महाराज जी बोले, अच्छा फिर तुम सुनो! श्री गुरू दशमेश जी का जो आखिरी युद्ध था श्री आनंदपुर साहिब का, उस समय तकलीफों से घबरा कर कुछ गुरसिक्खों ने अपने मन की मति धारण कर ली। वे अब श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी को इस प्रकार से सलाहें देने लग पड़े जैसे कि गुरू जी कोई अल्पज्ञ जीव होते हैं और कुछ जानते ही नहीं होते हैं। वे गुरू को साधारण मनुष्यों की भांति ही समझने लग पड़े और जो उनकी पहले वाली भावना थी -

गुर गोविंदु गुोविंदु गुरु है नानक भेदु न भाई ॥
अंग - 442

कि गुरू और परमात्मा एक ही होता है उस निश्चय से नीचे आकर वे गुरू को एक मनुष्य की भांति ही देखने लग पड़े। अब वे सोचने लगे कि गुरू एक सयाना, सुन्दर व उत्तम मनुष्य है। जब वे मनुष्य स्तर पर गुरू को समझने लग पड़े तो वे गुरू को ही सलाहें देने लग पड़े और उन्होंने सलाह दी कि आप किले को ही खाली कर जाओ। गुरू जी कहते थे कि हम लोगों को किला नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि बाहर जाकर हमारे बचने की सम्भावनाएँ न के बराबर हैं। बाहर चारों और दुश्मन सेनाओं ने चप्पे-चप्पे पर नाकेबन्दी कर रखी है किले को छोड़कर तुम लोग जाओगे कहाँ? दुश्मनों को जब इस बात का पता चल गया तो उन्होंने यह बात फैला दी कि जो किले को छोड़कर बाहर आ जाएंगे उन्हें हम कुछ भी नहीं कहेंगे। उस समय ऐसे हालात पैदा हो गए कि गुरू जी कहने लगे, देखो! सिक्खो! गुरू और सिक्ख का जो रिश्ता है वह आज्ञा व विश्वास के साथ बँधा हुआ होता है। यदि विश्वास और हुक्म को इस रिश्ते में से बाहर निकाल दो तो फिर इसमें कुछ भी शेष नहीं रह जाता है। फिर तो जैसे आम मनुष्य हैं उसी तरह से गुरू और सिक्ख हो जाते हैं। जो श्रद्धाभावना का रिश्ता है, वही उन्हें बाँधकर रखता है। यदि तुम लोगों के अन्दर श्रद्धा ही नहीं रही, भावना ही नहीं रही और तुम लोग अपनी सलाह गुरू को देने लग पड़े फिर तो अपना रिश्ता ही समाप्त हो गया। फिर तो तुम लोग यह लिख दो कि तुम हमारे गुरु नहीं और हम तुम्हारे सिक्ख नहीं। अब एक कागज के ऊपर यह बात लिख ली गई। दस्तख्त होने शुरू हो गए। उस कागज पर दस्तख्त करने वालों में से तुम भी एक थे (सुध सिंह को महापुरुष सारी वार्ता बतला रहे हैं) लेकिन जब घर वापिस लौटे तो फिर उनके परिजनों ने उनके ऊपर बहुत कटाक्ष किए कि सदा के लिए तो कोई जीवित रहता ही नहीं है मौत तो एक दिन आ ही जानी है। यह तो कभी भी टला नहीं करती है -

नह बारिक नह जोबनै नह बिरधी कछु बंधु ॥
एह बेरा नह बूझीऐ जउ आइ परै जम फंधु ॥
अंग - 254

आज तक संसार के अन्दर कोई भी ऐसा मनुष्य नहीं आया या कोई भी ऐसी चीज नहीं आई जिसका नाश न हो। धरती, सूर्य, चन्द्रमा, तारे एक बार नहीं, कई बार समाप्त हुए व दोबारा बने हैं। कई बार ये खण्ड-ब्रह्मांड बने हैं और नष्ट हुए हैं। खरबों सालों जितनी उम्र वाली चीजें जब समय आ जाता है तो वे मिट जाया करती हैं। साधु संगत जी! इन सब चीजों की भी उम्र होती है। फिर इस व्यक्ति ने क्या बचना है यह तो है ही बहुत छोटी सी उम्र वाला है। वे सब सत्संग श्रवण करने वाले थे, अतः ये सब वचन उनके अन्दर घूमने लग पड़े। अब उनके मन में पाश्चाताप होने लग पड़ा कि ऐ मन! यहाँ पर आकर क्या हम लोग सदा के लिए बच जाएँगे? एक होता है कि जब समय आ जाए, दूसरा कारण आ जाए, तीसरा वह जगह आ जाए जहाँ पर कि शरीरान्त होना है। जब ये तीनों चीजें मिल जाएँ तो फिर शरीर का

अन्त हो जाता है लेकिन जब तक ये तीनों चीजें नहीं मिलती हैं, तब तक शरीर का अन्त नहीं होता है।

और फिर कारण के बिना तो कोई इस संसार से जाता ही नहीं है। यदि कोई बिना कारण जाता है तो केवल महापुरुष ही जाते हैं क्योंकि वे काल से ऊपर होते हैं -

प्रभ कै सिमरनि कालु परहरै ॥ ***अंग - 262***

वे काल को जीतने वाले होते हैं तथा अकाल मण्डल के वासी होते हैं इसीलिए उनके पास काल तो आ ही नहीं सकता है। अतः यदि उनकी इच्छा होती है तो वे चले जाते हैं और यदि उनकी इच्छा नहीं होती है तो नहीं जाते हैं।

बाबा करम सिंह जी होती मरदान वालों ने संगत को पत्र डालकर बुलवा लिया कि प्रेमीजनो! यह जो पाँच तत्वों का शरीर है इसका समय आ गया है। उसमें केवल एक सप्ताह शेष है फिर तुम लोगों के मन में यह बात रह जाएगी कि हम लोग अन्तिम बार बाबा जी के दर्शन नहीं कर सके। हमने तो अमुक बात पूछनी थी, फलां बात जाननी थी, आदि। सारी उम्र तुम लोग हमारे साथ रहे इसलिए हम नहीं चाहते हैं कि हमारे जाने के बाद तुम्हारे मन में कोई शंका रह जाए या तुम्हारे मन में कई दुख पैदा हो। अतः आओ! और आकर अपने शंकाओं की निवृत्ति कर लो, इसके अतिरिक्त तुम्हारे अन्दर कोई कामनाएँ हों, वासनाएँ हों, तो उन्हें बताओ।

इस प्रकार बहुत सारी संगत इकट्ठी हो गई। पंजाब से, अफगानिस्तान से, सारे सीमावर्ती क्षेत्रों से, काश्मीर वगैरह से श्रद्धालुजन पहुँच गए क्योंकि सब जगहों पर उन्हें प्यार करने वाले थे। आप पूर्ण पुरुष या ब्रह्मज्ञानी महापुरुष थे। उस समय सात दिन शेष थे। उन्होंने आकर माँगना तो क्या था क्योंकि वे वहाँ पर आकर कब कुछ भूल ही गए। वे प्यार में इतने लीन हो गए कि बाबा जी ने तो हमें छोड़कर चले ही जाना है। वे बार-बार यही कहने लग पड़े कि बाबा जी! हम इस विछोड़े को सह ही नहीं पाएँगे। बस हमारी एक माँग पूरी कर दो कि हम लोग आपसे पहले ही यहाँ से चले जाएँ क्योंकि -

जिसु पिआरे सिउ नेहु तिसु आगै मरि चलीऐ ॥
धिगु जीवणु संसारि ता कै पाछै जीवणा ॥

अंग - 83

बाबा जी सबका ढाढ़स बँधाते हैं, अब धीरे-धीरे अन्तिम दिन भी आ गया। सबके मन में बेतहाशा वैराग्य है कि आज बाबा जी ने शाम को 4.30 बजे अपने शरीर का परित्याग कर जाना है। मिस्त्रियों ने बक्सा तैयार कर दिया। सभी देख रहे हैं कि इस बक्से में लेटकर आज सबके सामने ही बाबा जी ने अलोप हो जाना है। लेकिन किसी के वश में तो कुछ भी नहीं है। बस हृदय की आवाज है जो कि आँखों के माध्यम से आँसू बनकर निकल रही है। संगत की ऐसी विह्वलता को देखकर लंगर के श्रीमान बाबा लाल सिंह जी का हृदय भी द्रवीभूत हो गया। उन्होंने संगत को अपने साथ लिया और बाबा जी के चरणों में विनती की कि महाराज जी! संगत का हाल मुझसे देखा नहीं जा रहा है, आप समर्थ पुरुष हो, कृपा करो आप संगत को और समय तक दर्शन दो। जब सबने बार-बार विनती की तो बाबा जी का हृदय भी प्यार के वशीभूत होकर, दया के मण्डल में प्रवेश कर गया।

आप कहने लगे, लाल सिंह जी! एक काम हम लोग कर सकते हैं क्योंकि यदि हम चाहें तो अभी बीस वर्ष के लिए भी रुक सकते हैं क्योंकि गुरू जी का फुरमान है -

गुरमुखि आवै जाइ निसंगु ॥ ***अंग - 932***

जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए ॥
जीअ दानु दे भगती लाईन हरि सिउ लैनि मिलाए॥

अंग - 749

सभी कहने लगे, हाँ महाराज जी! यदि आप चाहें तो ऐसा कर सकते हैं। लेकिन बाबा जी बोले, लाल सिंह! अपने लोगों ने अकालपुरुष की मर्यादा को भंग नहीं करना है। हाँ एक काम किया जा सकता है। आपको याद होगा कि गुरु सातवें महाराज जी के समय जब एक ब्राह्मण का लड़का परलोक सिधार गया तो वे सातवें महाराज जी के पास उस मृतक को ले आए और हठ करने लगे कि मेरे लड़के को जीवित करो अन्यथा मैंने भी यहीं पर अपनी चिता तैयार करके जल जाना है। उस समय भाई जीवन सिंह जी ने अपने शरीर का परित्याग करके उस ब्राह्मण के लड़के को श्वास प्रदान कर दिए थे। यह प्रबन्ध तो गुरू घर में पहले से चला आ रहा है। वाहिगुरू जी इसे मान लेते हैं।

आप हमारी बारी पर यदि चले जाओ तो फिर हम तुम्हारी बारी पर आ जाएँगे। तुम्हारे जीवन का समय दो साल दो महीने व दो दिन शेष बचे हैं और हमारा समय आज शाम को साढ़े चार बजे पूरा हो रहा है। यह तरीका तो हम लोग अपना सकते हैं अन्य कोई तरीका नहीं अपनाया जा सकता है।

वे (बाबा लाल सिंह जी) कहने लगे, महाराज जी हमें

यह शर्त मंजूर है। अब जाना तो हमें भी पड़ेगा ही लेकिन संगत को कुछ सांत्वना मिल जाए तो इससे अच्छा और क्या हो सकता है आखिर अपने लोगों ने अपने घर को तो जाना ही है। इसलिए अभी चले चलते हैं। अतः उस समय? ठीक साढ़े चार बजे बाबा लाल सिंह जी ने सारी संगत के सामने अपने पाँच तत्वों वाले शरीर को अलविदा कह दिया यानि कि आप मृतक शरीर को छोड़कर स्वयं अपनी उड़ान पर निकल गए। इसके बाद बाबा जी ने दो साल, दो महीने, दो दिन बाद सैदोनगर जाकर उनके स्थान पर अपने शरीर का परित्याग कर दिया। अतः विचार का तात्पर्य यह है कि इस समय को टाला नहीं जा सकता है। आज तक संसार में कोई भी ऐसा नहीं है जो कि समय को बदल दे। महापुरुषों ने भी इसे नहीं बदला। अब इस प्रकार के ख्याल मन में आ रहे हैं कि ऐ मन! गुरू के साथ भी हमने अच्छा नहीं किया। सिक्ख होकर, शीश भी दे दिया, तन भी दे दिया, मन भी दे दिया और धन भी दे दिया लेकिन पुनः गुरू से वापिस ले लेना, यह तो चोरी है। हम लोग तो गुरू को दिए गए वचन से घर गए अब कौन सा बच जाएंगे?

बाबा जी कहने लगे, (बाबा साहिब सिंह जी) प्रेमी पुरुष! तुम फिर उन सिक्खों के साथ मुक्तसर आ गए और फिर वहाँ पर आकर तुमने शहादत प्राप्त की। गुरू महाराज जी ने तुम्हें वर दिया पाँच हजारी। कहने लगा, महाराज जी! इस हाथी का मेरे साथ क्या सम्बन्ध है? बाबा जी कहने लगे, यह तुम्हारा नौकर था, घर में कोई चोरी हो गई और तुमने पीट-पीट कर इसे मार डाला। उधर यह बेगुनाह था, चोरी इसने नहीं की थी।

अब यह हाथी बन गया है। इसके कर्म ही कुछ ऐसे थे क्योंकि इसने भजन-बन्दगी नहीं की जो मनुष्य जन्म इसे प्राप्त हुआ था, वह इसके हाथों से यूँ ही बीत गया। लेकिन उस कर्म का तुम दोनों को सम्बन्ध था। उस कर्म ने तुम्हें प्रेरणा प्रदान की, फलस्वरूप तुम इसे बाबारंकी के जंगलों से लेकर आए तथा इसे अपने पास रख लिया। प्रेमीजन! अब यह तुम्हें दूसरों से तो बचाता है लेकिन स्वयं यह तुम्हें मारेगा। यह हमारा वचन है। उधर राजा सुध सिंह के मन में बहुत शौक है कि हाथी बहुत सुन्दर है और इसकी सवारी बहुत अच्छी है।

जब तीन महीने बाद बाबा जी के पास उस राजा सुध सिंह के क्षेत्र की संगत आई तो बाबा जी कहने लगे, भाई सुध सिंह का क्या हाल है? वे बोले, महाराज जी! उसे तो दो महीने पहले उसी के हाथी ने मार डाला।

बाबा जी बोले, उसने हमारा वचन नहीं माना। श्रद्धालुजन बोले, महाराज जी! वह तो आपका वचन मानता था लेकिन जो उसके अंगरक्षक थे उन्होंने उसे गलत प्रकार से समझा दिया।

विनाशकाले बुद्धि विपरीत।

कोई व्यक्ति कितना भी सयाना क्यों न हो जब होनहार क्रियाशील हो जाती है तो फिर बुद्धि का नाश सबसे पहले होता है। फिर देखते ही देखते उल्टा काम चल पड़ता है।

वे कहने लगे, महाराज उन्होंने कहा, सरदार जी! आप सन्त जी के सामने हाथी पर चढ़कर चले गए और यह बात उन्हें अच्छी कैसे लग सकती थी? इसलिए युक्ति के द्वारा उन्होंने आपको हाथी पर चढ़ने से ही रोक दिया।

इस प्रकार से यह जरूरी नहीं होता कि व्यक्ति दोबारा मनुष्य ही बन जाए। योनियों के अन्दर तो यह कर्मों के हिसाब से ही जाता है। कितनी कथाएँ आती हैं कि कोई रीछ बन गया, कोई कौआ बन गया।

गुरू छठे महाराज जी ने एक बहुत बड़ा शेर ग्वालियर में मारा था, वह जहाँगीर का चाचा था जिसका उद्धार आप ने कर दिया। लेकिन पांवटा साहिब के पास एक शेर, जिसे कि दशमेश जी ने मारा था, वह जयद्रथ था।

अतः इस प्रकार से यह व्यक्ति योनियों में भटकता रहता है। महाराज जी कहते हैं कि प्रेमीजनो! उनका छुटकारा तो नहीं हो सका न? ऐसा नहीं है कि यदि मर गया तो उसका छुटकारा हो गया। मरने के कारण तो यह बुरा हुआ कि जो मनष्य जन्म उसे प्राप्त हुआ था, जिसमें रहते हुए उसने कर्म, उपासना, ज्ञान तथा विज्ञान की चार मंजिलों में से निकलकर परम पदवी प्राप्त करनी थी और इस विधि से अपने सारे दुखों को समाप्त करना था, मूर्ख व्यक्ति ने उस अवसर को यूँ ही गंवा लिया। बहुत बड़ा बनने की लालसा इसके मन में पैदा हो गई कि मैं बहुत बड़ा हूँ। महाराज जी कहते हैं -

पापा बाझहु होवै नाही मुइआ साथि न जाई ॥

अंग - 417

यदि माया एकत्र करनी हो तो बहुत ज्यादा पाप हो जाते हैं। कोई रिश्वत लेता है, कोई ठगी मारता है, कोई धोखा देता है यानि कि वह येन-केन-प्रकारेण दूसरों को दुखी करता है। इतने गलत तरीकों से यह धन को एकत्र करता है लेकिन

विडम्बना यह है कि फिर यह माया साथ में नहीं जाती है। यहाँ माया के होते हुए भी सुख की प्राप्ति नहीं हो पाती है और सुख तो क्या मिलना था उल्टा चिन्ता रोग लग जाता है-

वडे वडे जो दीसहि लोग ॥
तिन कउ बिआपै चिंता रोग ॥ *अंग - 188*

बड़ा कौन है? महाराज जी कहते हैं कि माया वाला बड़ा नहीं हुआ करता है -

कउन वडा माइआ वडिआई ॥ *अंग - 188*

गुरू जी कहते हैं, नहीं यह बात नहीं है अपितु -

सो वडा जिनि राम लिव लाई ॥ *अंग - 188*

जिसने परमात्मा के साथ अपना निरन्तर ध्यान को जोड़ लिया जो हमेशा उसका सिमरन करता रहता है, उसे लिव कहते हैं, यानि कि जो सोते, जागते उसी की याद में जुड़ा रहता है। अत: गुरू जी कहते हैं कि बड़ा वही है जिसने मनुष्य जन्म के अन्दर आकर राम के नाम के साथ अपनी लिव को लगा लिया। जो विषय-विकारों में, भोगों में प्रवृत्त होते हैं, जिनका मन सदैव भोगों की तरफ झुका रहता है वे आखिर में जाकर बहुत अधिक दुखी होते हैं क्योंकि वे भोग ही फिर नर्क रूप बन जाते हैं। गुरू जी कहते हैं -

भूमीआ भूमि उपरि नित लुझै ॥
छोडि चलै त्रिसना नही बुझै ॥ *अंग - 188*

गुरू दसवें महाराज जी अपने सिक्खों के साथ जा रहे हैं। आपके बाईं तरफ एक तीतर जोर-जोर से बोल रहा है। गुरू दशमेश पिता जी घोड़े पर सवार हैं और यह उपुर्यक्त तुक अचानक आपके मुख से उच्चरित होने लग पड़ी। सबने कहा महाराज जी! यह पंक्ति आप अचानक क्यों उच्चारण करने लग पड़े?

महाराज जी बोले यह पंक्ति हमने तीतर की तरफ देखकर उच्चरित की है।

सिक्ख बोले, महाराज जी! हमें भी इसके बारे में कुछ बताने की कृपा करें।

महाराज जी बोले, प्रेमीजनो! जहाँ से हम लोग चले जा रहे हैं। इन पाँच-दस गाँवों का राजा था, यह तीतर। यह भूमि इसके निजी स्वामित्व में आती थी। आखिर यह मर गया लेकिन इसकी पकड़ इतनी मजबूत थी कि यह इसी धरती पर बार-बार जन्म लेता है और मर जाता है। वह याददाश्त इसके अन्दर बहुत गहरी गई हुई है लेकिन यह कर कुछ भी नहीं सकता है लेकिन इसे यह पता है कि यह भूमि मेरी है। इस समय यह हम लोगों को कह रहा है कि मेरी जमीन से दूर होकर निकलो। गुरू जी ने कहा, सिक्खो! जाओ इसे पकड़ कर लाओ, यह काना तीतर है। सिक्ख पकड़ कर ले आए। महाराज जी के मन में दया आ गई और उन्होंने उसका उद्धार कर दिया।

अब उसकी इतनी भूमि ने उसे सुख नहीं दिया और उल्टा वह तीतर योनि में आ गया उससे भी पहले कई योनियों में जा चुका था।

सन्त महाराज जी राड़ा साहिब में जब ढक्की में तप किया करते थे तो आपके सामने रोज एक साँप आकर फन फैला कर खड़ा हो जाया करता था। आप उसे कुछ नहीं कहा करते थे। सेवादार कहने लगा, महाराज जी! यह कई दिनों से आ रहा है, कहीं यह कोई नुक्सान न पहुँचाए?

महाराज जी बोले, तुम लोग चिन्ता मत करो, यह बहुत दुखी है। एक दिन सेवादार ने कहा महाराज जी! वही साँप आपकी कुटिया की पिछली तरफ घास-फूस में मुँह दबाकर मरा पड़ा है। दरअस्ल वहाँ पर साढ़े चार वर्ग फुट के गड्ढे खोदे हुए होते थे और उन पर छोटी-छोटी सी कुटिया डाली हुई होती थी। सेवादार कहने लगे, महाराज जी! वह आपकी तरफ को मुँह करके पड़ा है। आपने कहा, ठीक हो गया है।

सेवादार कहने लगे, महाराज जी! हमें भी कृपा करके कुछ रहस्यात्मक बात बताने की कृपा करें।

महाराज जी बताने लगे कि जब छठे महाराज जी इस गाँव में आए तो उस समय यह इस क्षेत्र का बहुत बड़ा चौधरी था। जब यह गुरू जी के दर्शन करने आया तो इसके मन में अपनी चौधर का इतना अधिक घमंड था कि यह महाराज जी के पलंग पर ही बैठने लगा लेकिन सिक्खों ने इसे समझाया कि ऐ मूर्ख! गुरू जी आए हुए हैं, इनसे अपना कोई भला करवा लो। तुम इनके बराबर बैठोगे? लेकिन यह अभिमान में था, इसलिए इसे कोई बात समझ में नहीं आई। फलस्वरूप यह बिना कुछ बतलाए और बिना नमस्कार किए ही यह वापिस चला गया और मरने के बाद -

अंति कालि जो लछमी सिमरै
औसी चिंता महि जे मरै ॥

सरप जोनि वलि वलि अउतरै ॥ *अंग - 526*

उसने उसे सर्प बना दिया और यहाँ पर उसी समय से घूम रहा है। इतना तप्त अवस्था में इस समय में है कि इसे शान्ति नहीं आ रही है। यह जल रहा है और यह बहुत जहरीला सर्प है। अतः इसका समय आ गया था।

महाराज जी स्वयं तो यह बात कह नहीं सकते थे। हम यह बात कह सकते हैं और वह बात यह है कि उसने पूर्ण ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों का दर्शन किया, फलस्वरूप वह विनम्रता में आ गया। फन को ऊँचा उठा-उठाकर विनतियाँ करता था कि मेरा भी उद्धार कर दो। पाँच-सात दिन उसके ऊपर दृष्टि पड़ती रही और महापुरुषों की दृष्टि -

ब्रहम गिआनी की द्रिसटि अंम्रितु बरसी ॥

अंग - 273

उसे ठंड पड़ गई और आज वह परलोक सिधार गया। अतः उसके अहंभाव ने उसे कहाँ पहुँचा दिया? उसे साँप बनना पड़ गया। इसीलिए महाराज जी कहते हैं कि बिना परमात्मा के भजन से छुटकारा असम्भव है -

कहु नानक इहु ततु बीचारा ॥
बिनु हरि भजन नाही छुटकारा ॥ *अंग - 188*

भजन-बन्दगी के बिना किसी का छुटकारा संसार में नहीं हो सकता है। जितनी चीज यह कीमती है उतने ही हम इस तरफ से उदासीन हैं। कारण क्या है? हमारे मन में यह बात क्यों नहीं बसती है? कारण यह है कि हमारा भाग्योदय नहीं हुआ है। समय अभी नहीं आ पाया है, इसीलिए उस बात पर हम लोगों ने ध्यान नहीं दिया है। सन्तजनों को इस बात का पता होता है क्योंकि -

धारना - महिमा हरि नाम दी,
संताँ दे हिरदे वसदी।

नाम की महिमा संत रिद वसै ॥
संत प्रतापि दुरतु सभु नसै ॥ *अंग - 265*

जितनी बुद्धि भ्रष्ट है, जितने बुरे संस्कार हैं, बुद्धि के अन्दर जो कूड़-कबाड़ भरा हुआ है, तुम्हारे अन्दर जो अन्धकार ही अन्धकार है, बेचैनी ही बेचैनी है। महाराज जी कहते हैं कि उनकी संगत करके यह बुरी मति को दूर हो जाती है। साधू का दर्शन करके यह बुरी बुद्धि फिर टिका नहीं करती है। इस प्रकार से साधू की संगत का लाभ होता है क्योंकि उसने नाम जपा होता है, फिर उसका फल क्या होता है -

जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी
काला होआ सिआहु ॥
खंनली धोती उजली न होवई जे सउ धोवणि पाहु ॥

अंग - 651

हमारे मन में जन्म-जन्मान्तरों की मैल लगने के कारण, वह पापों की कालिख के कारण पूर्णतः काले हुए पड़े हैं, उन सबका नाश हो जाया करता है -

धारना - सारे पापाँ दा नाश हो जावे,
संगत करके साधूआँ दी।

साधू की संगत के द्वारा सारे पाप समाप्त हो जाते हैं -

हरि सिमरत सभि मिटहि कलेस ॥ *अंग - 194*

गुरू जी कहते हैं कि फिर कोई भी पाप शेष नहीं रह जाता है क्योंकि साधू की संगत के बिना नाम नहीं चल पाया करता है। जब नाम मन में बस गया तो उस समय सारे क्लेश मिटने शुरू हो जाते हैं -

चरण कमल मन महि परवेस ॥ *अंग - 194*

वाहिगुरू जी का असली स्वरूप है - निगुर्ण स्वरूप और वह कण-कण में व्याप्त है तथा उसके अन्दर जो नाम की रौ है, जो नाम की तरंग है, जिसकी उपमा चरण कमल से की गई है, वह मन के अन्दर प्रवेश कर जाता है। अतः महाराज जी हमें कहते हैं कि ऐ प्रेमीजनो! तुम लोग भी नाम का जप करो -

उचरहु राम नामु लख बारी ॥
अंम्रित रसु पीवहु प्रभ पिआरी ॥ *अंग - 194*

ऐ प्यारी संगत! आप भी नाम का रस पियो। वहाँ है क्या? जब नाम के मण्डल में पहुँच गए तो फिर रस पीने वाले की चाहे सांसारिक स्थिति किसी भी प्रकार की हो -

बसता तूटी झुंपड़ी चीर सभि छिंना ॥
जाति न पति न आदरो उदिआन भ्रमिंना ॥
मित्र न इठ धन रुपहीण किछु साकु न सिंना ॥
राजा सगली स्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना ॥

अंग - 707

महाराजाओं का मन भी पूर्णानन्द में नहीं होता है और राजाओं का मन तो बहुत अधिक अस्थिर रहा करता है। वह तो जलता ही रहता है जबकि दूसरी तरफ नाम रसिक को महानन्द की प्राप्ति हो जाती है -

सूख सहज रस महा अनम्दा ॥

जपि जपि जीवे परमानम्दा॥ *अंग - 194*

और जो पाँच चोर हैं जो हमेशा तंग करते हैं और निरन्तर अमृत लूटते हैं -

काम क्रोध लोभ मद खोए ॥
साध कै संगि किलबिख सभ धोए ॥ *अंग - 194*

पाँचों चोर तथा इनके जो साथी हैं यानि कि सभी प्रकार के जो पाप हैं, वे धुल जाते हैं अर्थात उनका अन्तःकरण निर्मल हो जाता है। इसलिए एक प्रार्थना है कि -

करि किरपा प्रभ दीन दइआला ॥
नानक दीजै साध रवाला ॥ *अंग - 194*

हे वाहिगुरू जी! यदि तुम मेरे ऊपर प्रसन्न हो तो कृपा करके मेरी माँग को स्वीकार कर लो। दरअस्ल मेरी मांग यह है कि मैं साधुओं के चरणों की धूल माँगता हूँ, जिनके प्रताप की बदौलत सारे पापों का नाश हो जाता है और महानन्द की प्राप्ति हो जाती है। गुरू-घर के अन्दर बहुत सारे ऐसे प्रयोगात्मक उदाहरण मिलते हैं कि व्यक्ति इतना अधिक पापी हो चुका है कि उसका मुख्य धारा में लौटना नामुमकिन सा ही प्रतीत हो रहा है और उसके हाथों से सारा समय निकल चुका है। जिस प्रकार से यदि कोई चीज तेज पानी में बह जाए तो वह कैसे अपने श्रोत पर वापिस आ सकती है? इतिहास के अन्दर ऐसा जिक्र आता है, जिसका उल्लेख श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर भी आता है -

मन रे प्रभ की सरनि बिचारो ॥
जिह सिमरत गनका सी उधरी.....॥ *अंग - 632*

महाराज जी ने उदाहरण दिया है क्योंकि आम आदमी तो स्वतः ही इस दायरे में आ जाते हैं कहावत है कि हाथी के पैर जितनी जगह में सारे जानवरों के पैर आराम से समा सकते हैं। किसी बड़े कड़ाहे के दोनों कुण्डों को पकड़ लो, आम छोटी मोटी चीजें तो अपने आप ही उसके अन्दर आ जाती हैं। जब कड़ाहे को उठा लिया तो सारी चीजें अपने आप ही उठ जाएँगी। अतः ऐसी मिसाल को पेश किया जाए जैसा कि आम समाज में कोई व्यक्ति न मिले। इस बारे में भाई गुरदास जी इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

धारना - पापाँ दा हार परोता,
गनका पापण ने।

गनिका पापणि होइकै पापाँ दा गलि हारु परोता॥
भाई गुरदास जी, वार 10/21

वह पापों से भरी हुई ही पैदा नहीं हुई थी लेकिन वह पापों में बहुत अधिक प्रवृत्त होकर 'पापिन' बन गई। जैसे नाम जपने वाला साधू बन जाता है चोरियाँ करने वाला चोर बन जाता है, डकैती डालने वाला डाकू बन जाता है लेकिन वह पहले से ही ऐसा नहीं होता है। जिस प्रकार की संगत के प्रभाव के कारण वह जिस प्रकार के काम करता है, उसे उसी के अनुरूप उपाधि मिल जाती है। अतः उसे पापिन की उपाधि प्राप्त हो गई। कहते हैं कि उसने इतने अधिक पाप किए कि मानो पापों का हार ही गले में डाल लिया। यह भी अपनी-अपनी समझ का विषय है।

एक बार इटली के दो शहरों के अन्दर जो कि समुद्र के तटवर्ती शहर थे, एक संस्कृति पनप गई कि वहाँ पर औरतें पतिव्रता होना बुरा मानती थीं। सर्वाधिक सम्मान वाली बात यह थी कि जिसने सर्वाधिक पुरुषों के साथ सम्बन्ध बनाए या व्यभिचार किए। बड़ी-बड़ी मालाएं वहाँ लटकती रहती थीं, जब कोई महिला एक दुष्कर्म कर लेती थी तो वह उस माला को एक गाँठ और दे देती थी। जब वे सामूहिक रूप से इकट्ठी होती तो जिसके गले में सर्वाधिक गाँठों वाली माला होती तो उसे बहुत बड़ा रुतबा हासिल होता। अब यह भी एक अलग प्रकार की संस्कृति है, बेसमझी वाली बात है। इस बात का परिणाम यह हुआ कि वहाँ एक पर्वत में से बहुत भयंकर ज्वालामुखी फटा फलस्वरूप वे दोनों शहर गरक हो गए और ऊपर से गर्म-गर्म लावा पड़ गया अर्थात वे दोनों शहर समुद्र के गर्त में समा गए। उसी समय से महापुरुष उस घटना का हवाला देते आए हैं कि देखो इतना पाप बढ़ गया कि परमात्मा की तरफ से उन्हें उसका फल सजा के रूप में दिया गया। अब बात यह थी कि वे पाप को भी पुण्य की तरह से समझने लग पड़े।

यह व्यक्ति विशेष के मन की दशा हुआ करती है। कुछ लोगों का मन करता है कि नाम स्मरण करें, बन्दगी करें, भक्ति करें और उसके विपरीत कुछ लोग भजन-बन्दगी का नाम भी लेने के लिए तैयार नहीं होते हैं और वे सदैव पापों में प्रवृत्त होकर ही प्रसन्नता महसूस करते हैं -

धारना - पापी बंदिआँ नूं पाप पिआरा,
भगती ना भावे रब दी।

कबीर पापी भगति न भावई हरि पूजा न सुहाइ ॥
माखी चंदनु परहरै जह बिगंध तह जाइ ॥
अंग - 1368

आप उदाहरण देते हैं कि मक्खी को सुगन्ध अच्छी ही नहीं लगती है और वह तो वहीं पर जाती है जहाँ पर कि दुर्गन्ध होती है। इसी प्रकार से जिसका हृदय पाप के कारण बज्र बन गया है, रसहीन हो गया है, उसका तो स्वभाव ही पाप करना बन जाता है। पाप करते समय वे सब कुछ भूल जाते हैं उन्हें इस बात का तनिक सा भी आभास नहीं होता है कि कण-कण में व्याप्त परमात्मा उन्हें प्रतिक्षण देख रहा है -

जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई ॥

अंग - 677

नास्तिक लोग पापों में प्रवृत्त हो जाते हैं और वे पाप को ही पुण्य बना लेते हैं। वे कहेंगे कि हम कोई गलत काम तो कर नहीं रहे हैं। शराब पीने वाले को कहो वह कहेगा कि मैं कौन सा किसी का गला काटता हूँ? चलो यह ठीक है कि माँस खाना पाप है, बुरा है। जब किसी जानवर का गला काटेंगे तो उसके बाद ही माँस खाएँगे। कई कहते हैं कि हम तो किसी का गला काटते ही नहीं हैं। हम तो अपनी जीविकोपार्जन करते हैं और सब्जी की जगह पर माँस ले आए इसें क्या फर्क है? महापुरुष कहते हैं कि ऐसी बात नहीं है, छः लोग उस पाप के भागीदार बनते हैं। जितना बड़ा पापी जानवर को काटने वाला है, उतना ही खाने वाला है। यदि वे खाते हैं तभी तो वे काटते हैं, यदि खाने वाला खाए ही नहीं तो फिर कौन काटेगा और कौन बेचेगा। इसी प्रकार से शराब पीने वाला कहता है कि मैं कौन सा बुरा कार्य करता हूँ। मैं तो एक सड़े हुए पानी को, जिसे कि वैसे भी फेंक ही देना है, जिसे कोई देखना भी पसन्द नहीं करता है और जिस पानी में से बदबू आती है, उसे आग पर रखकर शुद्ध कर लेता हूँ उसके बाद उसे पी लेता हूँ। इसी बात को आप लोग पापी-पापी कहते रहते हो। यही नहीं फिर आप कहते हो कि मुझे दरगाह में जाकर भी धक्के ही मिलेंगे। मैंने ऐसा क्या अपराध कर दिया? कुछ भी तो बुरा मैं नहीं करता हूँ।

परमात्मा कहता है कि ऐ भद्रपुरुष! तुम्हें ऐसा बेशकीमती मनुष्य शरीर दिया है जिसकी कीमत भी आँकना नामुमकिन है। कितनी तन्मयता से परमात्मा ने तुम्हारा शरीर बनाया है। 14 खरब सैल्स इसमें लगे हुए हैं, 15 अरब सेल्स तो केवल दिमाग में ही लगे हुए हैं, बहत्तर करोड़ बहत्तर लाख, बहत्तर हजार दो सौ रक्त वाहिनी नलिकाएँ इसमें लगी हुई हैं। इसी प्रकार से पाँच प्राण - प्राण, अपान, बियान, उदान तथा समान पृथक-पृथक कार्य करने वाली मोटरें लगी हुई हैं जो कि दिन-रात निरन्तर कार्य करती हैं। साढ़े तीन करोड़ इसके अन्दर रोमकूप हैं ताकि इसके अन्दर के विषाक्त तत्व बाहर निकलते रहें। इसी प्रकार से पच्चीस प्रकृतियाँ हैं। तुम्हारी आँख कितनी कीमती है, कान, जिह्वा आदि सब कितने कीमती हैं, स्पर्श के लिए तुम्हारी त्वचा है, नासिका सुगन्ध लेने के लिए है। कहीं वैसे ही तुम्हारा शरीर बन गया है? कितने तत्व लगे हुए हैं, इसके निर्माण में। कितनी सुन्दर चीजें इस मिट्टी में से ही तराश कर तुम्हें दी हैं। फिर तुम्हें यह मौका दिया गया है कि इसका सदुपयोग करके अपने सारे दुखों का नाश कर लो। इसके लिए तुम्हें किसी महात्मा की शरण में जाकर कर्म, उपासना, ज्ञान तथा विज्ञान की मंजिलों को तय करके परमपद की प्राप्ति करनी पड़ेगी। जब तुम्हें तत्व पद की प्राप्ति हो गई तो फिर -

सोई फिरि कै तू भइआ जा कउ कहता अउरु ॥

अंग - 1269

तुम्हारे सारे दुखों का नाश हो जाएगा। अब यदि कोई इस कीमती शरीर का सदुपयोग न करके बस इसे यूँ ही बरबाद कर देता है तो फिर वह मुख्य दोषी हुआ या नहीं? अब यह बेशकीमती शरीर हमें दिया किसने है? यह मनष्य जन्म तो हमें परमात्मा ने ही दिया है न? हम इसके अन्दर बुद्धि रूपी ड्राइवर बनकर बैठे हुए हैं। यदि ड्राइवर खड्ढों में ले जाकर गाड़ी को तोड़ डाले फिर दोष किसे लगेगा? फिर यह प्रायः 'मैं' 'मैं' करता रहता है लेकिन 'मैं' कहाँ है, शरीर तो परमात्मा के द्वारा तुम्हें प्रदत्त है।

यदि परमात्मा अधरंग कर दे, कैंसर कर दे तुम्हारी दोनों आँखें ही ले ले तो फिर तुम क्या करोगे? इसलिए यह दोषी बन जाता है।

इसी प्रकार से कामी व्यक्ति है, वह कहता है कि हम कौन सा किसी को कोई हानि पहुँचाते हैं। इस प्रकार से यह व्यक्ति अपने आपको सही ठहराने लग पड़ता है। अब बहुत सारे लोग अपने पापों को छिपाकर रखते हैं कि लोगों को पता न लग जाए लेकिन महाराज जी कहते हैं कि ऐ भद्रपुरुष! जो सबसे बड़ी हस्ती है उससे तुम स्वयं को कैसे छिपा लोगे?

धारना - किवें मुकरेंगा पाप करके बंदिआ,
रब तेरे नाल वसदै।

उससे तुम किस प्रकार से इन्कार कर सकते हो?

सभु किछु सुणदा वेखदा किउ मुकरि पइआ जाइ ॥

अंग - 36

तुम उससे कैसे मुँह छिपा सकते हो? क्योंकि -

पेखत सुनत सदा है संगे मै मूरख जानिआ दूरी रे ॥
अंग - 612

जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई ॥
अंग - 677

जो इतना नजदीक है, तुम उससे कैसे मुँह फेर सकते हो? तुम्हारे पास इसका कोई तरीका है?

पापो पापु कमावदे पापे पचहि पचाइ ॥ अंग - 36

पापी लोग पाप करते हैं और उसका परिणाम दुख रूप में शरीर को भोगना पड़ता है और वह उसके अन्दर खप कर मर सकता है। पाप करने वाले को कभी भी खुशी की प्राप्ति नहीं हो पाया करती है। बन्दगी करने वाले के पास कुछ भी न हो, चाहे वह भूखा ही क्यों न हो लेकिन वह कुलाचें भरता फिरता है, वह झूमता रहता है, क्यों? क्योंकि उसके अन्दर आनन्द है -

सो प्रभु नदरि न आवई मनमुखि बूझ न पाइ ॥
अंग - 36

जो तुम्हारे साथ में रहता है, वह तो तुम्हारी निगाह में नहीं आता है। इसका कारण क्या है? मन के पीछे लगने वाला इस बात को नहीं समझता है। गुरू तो प्रायः आवाजें लगाता है -

फरीदा कूकेदिआ चाँगेदिआ मती देदिआ नित ॥
जो सैतानि वंजाइआ से कित फेरहि चित ॥
अंग - 1379

चार वेद, छः शास्त्र, सत्ताइस स्मृतियाँ, उपनिषदें, कुरान शरीफ, तौरेत, अंजील, जम्बूर, बाइबिल, गीता, श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी तथा असंख्य साधू व सन्तजन आवाजें लगाते हैं लेकिन मनमुखता इतनी अधिक हृदय में बस चुकी है कि इसका चित्त सही दिशा में जा ही नहीं पाता है -

जो सैतानि वंजाइआ से कित फेरहि चित ॥
अंग - 1379

वह किसी की बात नहीं सुनता है और न ही किसी की बात मानता ही है। बस वह तो पापों की दुनिया में ही मस्त रहता है -

सो प्रभु नदरि न आवई मनमुखि बूझ न पाइ ॥
जिसु वेखाले सोई वेखै नानक गुरमुखि पाइ ॥
अंग - 36

गुरुमुख या गुरु की संगत में से ही यह दुर्लभ वस्तु प्राप्त हुआ करती है।

अतः पाप को कोई भी व्यक्ति अच्छा नहीं कहता है कि यह बहुत अच्छी चीज है। पुण्य को तो सभी लोग अच्छा कहते हैं नेकी को, सेवा को, सभी अच्छा कहते हैं। जिस किसी की तुम मदद कर देते हो तो वह खुश हो जाता है लेकिन क्या पाप कर्म करने से भी कोई खुश होता है? इसीलिए गुरू जी कहते हैं कि -

पापु बुरा पापी कउ पिआरा ॥ अंग - 935

जो पाप में प्रवृत्त हो जाता है उसे तो पाप प्यारा ही लगता है लेकिन जो अर्न्तात्मा की आवाज है उसे कैसे दूर करेगा? इसके अन्दर निःशंक रूप से नकली आवाज, पापों वाली पैदा हो गई है, वह ऊपर-ऊपर से इसका मन बहलाती है कि तो क्या हुआ? ऐसे तो सभी करते हैं। क्या फिर सभी नर्कों को जाएँगे?

इस प्रकार से वे लोग अपने आपको सही ठहरा लेते हैं, फलस्वरूप पाप उन्हें अच्छा लगने लगता है -

पापु बुरा पापी कउ पिआरा ॥
पापि लदे पापे पासारा ॥
परहरि पापु पछाणै आपु ॥ अंग - 935

यदि वह पापों का परित्याग कर ले और स्वयं ही पहचान कर ले कि मैं कौन हूँ तो महाराज जी कहते हैं कि फिर वह पापों से ऊपर निकल जाता है यानि कि फिर वह पापों से मुक्त हो जाता है। यथा -

ना तिसु सोगु विजोगु संतापु ॥ अंग - 935

पाप का फल क्या होता है? दरगाह के अन्दर जाकर फिर उसे असह्यनीय दुख भोगने पड़ते हैं। जब पापों का हिसाब-किताब माँगा जाता है तो फिर क्या हाल होता है, इसका बड़ा ही मार्मिक चित्रण गुरू जी ने इस प्रकार से किया है -

धारना - जिंदे रोवेंगी ते रो-रो पछोतावेंगी,
फेर तेरा कोई ना बणे।

लै फाहे राती तुरहि प्रभु जाणै प्राणी ॥
तकहि नारि पराईआ लुकि अंदरि ठाणी ॥
संनी देनि विखंम थाइ मिठा मदु माणी ॥
करमी आपो आपणी आपे पछुताणी ॥
अजराईलु फरेसता तिल पीड़े घाणी ॥ अंग - 315

आपीनै भोग भोगि कै होइ भसमड़ि भउरु सिधाइआ॥
वडा होआ दुनीदारु गलि संगलु घति चलाइआ ॥
अगै करणी कीरति वाचीऐ
बहि लेखा करि समझाइआ॥
थाउ न होवी पउदीओ हुणि सुणीऐ किआ रुआइआ॥
मनि अंधै जनमु गवाइआ ॥ *अंग - 464*

पापी करम कमावदे करदे हाइे हाइ ॥
नानक जिउ मथनि माधाणीआ तिउ मथे धरम राइ ॥
अंग - 1425

उस समय तो पाप बहुत प्यारा लगता है। उस समय नहीं पता था कि मैं कैप्सूल के अन्दर जहर की गोली खा रहा हूँ। पाप करने वाले को यदि कोई समझाए तो वह कभी भी नहीं मानता है -

इस प्रकार से महाराज जी कहते हैं कि प्रेमीजनो! बाद में लेखा देना बहुत मुश्किल हो जाता है।

दरि लए लेखा पीड़ि छुटै नानका जिउ तेलु ॥
अंग - 473

लेकिन पापों के अन्दर पड़े हुए व्यक्ति को पाप बहुत ही प्यारा लगता है और व्यक्ति उस समय किसी की भी नहीं सुनता है, रिश्वत लेने वाला हजारों लाखों रुपयों की रिश्वत लेकर सोचता है कि मैं बहुत बड़ी जायदाद बना लूँगा, बच्चों के लिए इतनी जायदाद बना दूँगा और बहुत सुखी हो जाऊँगा।

लेकिन कोई व्यक्ति कभी सुखी देखा है? गुरू जी कहते हैं कि प्रेमीजनो! कोई भी इस प्रकार से सुख की प्राप्ति नहीं कर पाया करता है। यह बहुत कठिन बात है।

धारना - दुखीआ सभ संसार, नानक दुखीआ-दुखीआ।

बड़े-बड़े लोगों का उदाहरण देकर गुरू जी कहते हैं कि -

सहंसर दान दे इंदु रोआइआ ॥ *अंग - 953*

उसके लोक के अन्दर किस चीज की कमी थी? कई बार मैंने बतलाया है कि यहाँ के बादशाह की अपेक्षा इन्द्र देवता को दस अरब गुणा ज्यादा सुख है। यह कोई छोटी बात नहीं है। लेकिन फिर भी उसका मन शान्त न हो सका-

गोतमु तपा अहिलिआ इसती
तिसु देखि इंदु लुभाइआ ॥
सहस सरीर चिहन भग हूए ता मनि पछोताइआ ॥
अंग - 1344

उस समय उसे बहुत अधिक पाश्चाताप हुआ क्योंकि वह सुख कहीं दूसरी जगह ढूँढ़ रहा था। गुरू जी कहते हैं कि जिस जगह पर सुख मौजूद है यदि वहाँ पर नहीं ढूँढ़ेगा तो फिर सुख कैसे मिलेगा? -

ऐसा जगु देखिआ जूआरी ॥
सभि सुख मागै नामु बिसारी ॥ *अंग - 222*

यह व्यक्ति नाम को भूलकर कहता है कि मैं सुखी हूँ। रुखी-सुखी रोटी खा ली, बुरे कामों में नहीं पड़ा, दूसरों को धोखे नहीं दिए, रिश्वतें नहीं लीं। संसार के अन्दर बड़ी अच्छी चीजें प्रतीत होती हैं लेकिन मन में बहुत अफसोस है कि मैं बहुत पीछे रह गया। जो इसकी दृष्टि है वह कुत्ते वाली है। यदि कोई कुत्ते को रोड़ा मारता है तो वह रोड़े को ही झपट्टा मारता है। हमें शेर दृष्टि रखनी चाहिए। रोड़ा जिसने मारा है शेर उसके ऊपर झपटता है। गोली चल गई, लेकिन वह किसी को लगी नहीं लेकिन आवाज हुई। शेर उसी पर हमला करेगा जिसने गोली चलाई है। वह उस मचान पर हमला करता है, जहाँ पर शिकारी बैठा हुआ है अथवा जिसने गोली चलाई है। शेर बीस फुट ऊँची छलांग आराम से लगा सकता है। इसी प्रकार से महाराज जी कहते हैं कि भद्रपुरुष! तुम दूर दृष्टि रखो -

....दे लम्मी नदरि निहालीऐ ॥ *अंग - 474*

दूर देखो कि इसका परिणाम क्या होगा? अब तो तुम कह देते हो कि यह जग मीठा है, अगला किसने देखा है। प्रेमीपुरुष! परमात्मा का सिद्धान्त तुम्हारे कहने से तो बदल नहीं जाना है। बाद में तुम्हें बहुत दुखी होना पड़ेगा।

सन्त महाराज जी (सन्त ईशर सिंह जी महाराज राड़ा साहिब वाले) बताया करते थे कि एक कोई अधिकारी था, उसके पास कोई मुकद्दमा था जिसका कि वह फैसला लिखा रहा था। वह उस व्यक्ति को दोषी करार देकर फाँसी पर चढ़ाना चाहता था जो कि पूर्णत: निर्दोष था। उधर वह व्यक्ति परमात्मा के पास अपनी अरदासें कर रहा था कि हे प्रभु जी! आप कृपा करो क्योंकि मैं तो निर्दोष हूँ। आखिर प्रभु जी की दरगाह में उसकी अरदास सुनी गई। परमेश्वर ने अपना जो नियम है, जो सर्वत्र व्यापक है, उसके ऊपर से पर्दा हटा दिया। वह अधिकारी अब अपने फैसले को लिख रहा है कि इस व्यक्ति को (निर्दोष व्यक्ति को) फाँसी दे दी जाए। वह उसके लिए सजाए मौत दे रहा है। उधर एक व्यक्ति आकर उसके सामने खड़ा हो गया। उसकी कलम वहीं पर रुक गई। उस अधिकारी ने कहा, तुम कौन हो? कहाँ से आए हो? तुम कहाँ पर छिपे हुए थे?

वह बताने लगा, मैंने छिपना कहाँ था, मैं तो हमेशा तुम्हारे साथ ही रहता हूँ, मैं तो एक सैकेंड के लिए भी कभी छिपता नहीं हूँ।

अधिकारी ने कहा, लेकिन मैंने तो तुम्हें कभी देखा नहीं है?

वह बोला, फिर आज देख लो।

उसने कहा, तुम्हारा नाम क्या है?

वह बोला, मेरा तो नाम कुछ भी नहीं है, वैसे तुम लोगों ने मेरा नाम चित्रगुप्त रखा हुआ है। मैं तुम्हारे सारे चरित्र को रिकार्ड करता रहता हूँ। जब तुम संसार से चले जाओगे तो फिर तुम यह बात मत समझो कि आगे कुछ भी नहीं है। वहाँ पर फिर तुमसे, तुम्हारे द्वारा किए गए समस्त कर्मों का लेखा-जोखा लिया जाएगा। वहाँ पर तो फिर इस प्रकार से लेखा लिया जाएगा जैसे कि कोल्हू में तिलों को पेर कर तेल निकाला जाता है -

दरि लए लेखा पीड़ि छुटै नानका जिउ तेलु ॥
अंग - 473

एक-एक बात का जवाब वहाँ पर पूछा जाएगा -

नानकु आखै रे मना सुणीऐ सिख सही ॥
लेखा रबु मंगेसीआ बैठा कढि वही ॥
तलबा पउसनि आकीआ बाकी जिना रही ॥
अजराईलु फरेसता होसी आइ तई ॥ अंग - 953

इस प्रकार से लेखा लिया जाएगा कि फिर तुम वहाँ पर किसी बात का जवाब नहीं दे पाओगे।

धारना - जदों कूढ के वही लेखा मंगिआ,
फेर की जवाब देवेंगा।

है कोई जवाब? कहने लगा, मैंने क्या किया है? मैंने तो कोई गलत कार्य ही नहीं किया। उसने फटाफट पढ़ना शुरू कर दिया और कहने लगा, तुम्हारी तो सारी काली नोटबुक ही भरी पड़ी है मैं तो हमेशा तुम्हारे अन्दर बैठ कर लिखता रहता हूँ। मुझे अकालपुरुष ने तुम्हारा पहरेदार लगाया हुआ है। मैं सूक्ष्म शक्ति हूँ। मैं तुम्हारा सारा रिकार्ड नोट करता रहता हूँ। तुमने अब तक 1150 ऐसे उग्र पाप किए हैं कि जिनका जवाब दे पाना तुम्हारे लिए अत्यन्त मुश्किल है। आओ! मैं तुम्हें सारी झांकी दिखला दूँ। बन्द करो अपनी आँखें। क्या देखता है कि -

पापी करम कमावदे करदे हाए हाइ ॥
नानक जिउ मथनि माधाणीआ तिउ मथे धरम राइ ॥
अंग - 1425

आग में लाल सुर्ख तपे हुए खम्भे दिखाई पड़ते हैं कि तुम्हारे इस पाप का यह फल है, इसका अमुक फल है।

वह उन दृश्यों को देखकर काँप गया। कहने लगा कि ये तो बड़ी सख्त सजाएँ हैं। उस चित्रगुप्त ने कहा यहाँ पर तो तुम अपनी मर्जी से सजाएँ देते जा रहे हो और उधर तुमसे भी कोई जवाब लेने वाला बैठा है। जब तुम्हें जवाब देना पड़ेगा फिर तुम रोओगे और फिर उस समय तुम कुछ भी नहीं कर पाओगे। कहने लगा, कोई उपाय?

वह कहने लगा, उपाय तो है यदि तुम चाहते हो तो मैं तुम्हें बतला देता हूँ। सबसे पहले तो जो तुम इस फैसले को लिखने लगे हो, इसे काट दो। दूसरी बात यह है जो तुमने इन गलत फैसलों के माध्यम से जो पाप की कमाई इकट्ठी की है वह उन्हें वापस कर दो, जिनसे यह ली गई है। जिनके बारे में तुम्हें ठीक-ठीक याद नहीं रह गया है, उस धन को परमात्मा के नमित्त दे दो। अब वह अधिकारी सोचने लग पड़ा।

उस चित्रगुप्त ने अपनी दूसरी डायरी निकाली और वह उस पर कुछ लिखने लग पड़ा।

अधिकारी ने पूछा, बन्धु! अब तुम इस डायरी पर क्या लिख रहे हो? उसने बताया कि तुम्हारे मन के अन्दर जो अच्छे ख्याल आ रहे हैं मैं उन्हें लिख रहा हूँ। कल्युग के अन्दर यह रियायत है कि यदि व्यक्ति पाप के बारे में सोचता है तो लिखने वाले भी इन्तजार करते हैं कि शायद इसका मन सुधर जाए क्योंकि यह सारा युग ही पापों का चल रहा है, अतः चित्रगुप्त भी उसी समय नोट करता है, जिस समय उस पाप को अन्जाम दे दिया जा चुका होता है। दूसरी तरफ जो पुण्य कर्म हैं, वह उसी समय से लिखना शुरू कर दिया जाता है, जिस समय से वह उस पुण्य कर्म के बारे में सोचना शुरू कर देता है। अतः उसे सारी बात समझ आ गई। कहने लगा, मैंने तो बहुत ही बुरे कार्य किए हैं क्या मैं भी छूट सकता हूँ?

उसने कहा, बिल्कुल छूट सकते हो। तुम किसी महापुरुष की शरण में जाओ और वहाँ पर जाकर नाम वस्तु प्राप्त कर लो क्योंकि नाम ने करोड़ों पापों को काट देना है। पापों को काटने का केवल एक ही तरीका है और वह परमात्मा का नाम है -

मंने नाउ सोई जिणि जाइ ॥
अउरी करम न लेखै लाइ ॥ अंग - 954

महाराज जी कहते हैं कि सारी दुनिया बहुत दुखी है। बड़े-बड़े बादशाह, बड़े-बड़े देवते, जिनके पास सुखों की कोई गिनती ही नहीं है, वे भी रोते हैं लेकिन फिर जीतते कौन हैं? जीतते वे हैं जिन्हें परमात्मा के नाम की समझ पड़ गई और उन्होंने अपना उपचार कर लिया। चाहे उम्र बीत गई है, चाहे छोटी उम्र बीत गई, चाहे बड़ी बीत गई, इस बात का सवाल नहीं होता है -

फरीदा काली धउली साहिबु सदा है जे को चिति करे॥
आपणा लाइआ पिरमु न लगई जे लोचै सभु कोइ ॥
एहु पिरमु पिआला खसम का जै भावै तै देइ ॥

अंग - 1378

जब इधर से व्यक्ति अपनी दिशा बदल लेता है तो फिर पापों का बोझ हल्का हो जाता है।

कुछ दिन पहले मुझे एक टैलीफोन सन्देश आया। वे कह रहे थे कि क्या हमारे पापों का भी कोई इलाज हो सकता है? आपकी फिल्में हमने देख ली हैं लेकिन हमने तो बहुत अधिक गल्तियाँ की हैं क्या कोई ऐसा उपाय है जिससे कि हम भी छूट सकें।

मैंने कहा, देखो! वाहिगुरू जी जो हैं उसके बारे में गुरू पांचवें पातशाह जी ने लिखा है कि -

सदा सदा सदा दइआल ॥
सिमरि सिमरि नानक भए निहाल ॥ *अंग - 275*

आपने तीन बार कहा है कि वह कभी भी क्रोधित नहीं होता है। वह तो हमेशा दयालु ही रहता है, वह कभी हमें अपने कोप का शिकार नहीं बनाता है। सवाल उत्पन्न होता है कि फिर हमें सजा क्यों मिलती है? सजा तो हमें हमारे कर्मों के अनुसार ही मिलती है। परमात्मा तो कभी भी किसी को सजा नहीं देता है। वह तो प्राणिमात्र को प्यार करता है और उसके प्यार में इतनी शक्ति होती है कि वह पापों का नाश करके जीव को बचा लेता है। हमारा उसके साथ रिश्ता माता-पिता वाला है। माता-पिता का जिस प्रकार से अपने पुत्र के साथ प्यार होता है उसी प्रकार से परमात्मा का भी अपने बच्चों के साथ प्यार होता है। यदि पुत्र लाखों गल्तियाँ भी करे और उसके बाद यदि वह एक बार भी माता-पिता के पैरों में गिर कर रोने लग पड़े तथा कहे कि मुझे क्षमा कर दो तो माता-पिता उसके सारे गुनाहों को उसी समय बख्श देते हैं। माता जो है वह कभी भी अपने पुत्रों के अवगुणों को अपने चित्त में नहीं रखती है। आप एक बार इस बात को परमेश्वर के साथ अपना कर देख लो। यह पूर्णतः सत्य बात है। अपने हृदय के अन्दर से रोना शुरू कर दो, सारे पाप तुरन्त समाप्त हो जाएंगे लेकिन यदि ऊपरी तौर से ही रोना है और कुछ देर बाद परमात्मा को भूल ही जाना है तो फिर तो यह बात नहीं बन पाएगी क्योंकि परमात्मा को तो पता है कि यह ऊपर-ऊपर से बोल रहा है अथवा सच्चे दिल से बोल रहा है। उसे पता है कि यह कहीं क्षणिक भाव में आकर तो नहीं बोल रहा है। क्षणिक भाव को परमात्मा नहीं मानता है, वह तो दिल की सच्चाई को ही मानता है। उसका और हमारा जो सम्बन्ध है उसके बारे में गुरू जी इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

धारना - माता याद ना रखदी,
औगुण पुतराँ दे।

सुतु अपराध करत है जेते ॥
जननी चीति न राखसि तेते ॥ *अंग - 478*

पुत्र गुनाह करता जाता है, बुरी बातों में लिप्त रहता है, माँ-बाप को परेशान करता रहता है, लेकिन जब रोकर व पाश्चाताप करके माँ के पास आ जाता है तो माँ तुरन्त ही उसे अपने गले के साथ लगा लेती है और प्यार करने लग पड़ती है, अपनी गोद में ले लेती है। इसी प्रकार का सम्बन्ध हमारा व परमात्मा का है। जब हम पाश्चाताप करके उसकी शरण में आ जाते हैं तो वह हमें बख्श दिया करता है। अपने मन के ऊपर बोझ मत रखो। प्रत्येक समय यही मत कहते रहो कि मैं पापी हूँ, मैं पापी हूँ। उसे भूल जाओ, जो हो गया। परमात्मा के पास क्षमायाचना एक बार कर लो, वह सारे अवगुणों को क्षमा करने में देर नहीं लगाता है क्योंकि उसका नाम ही बख्शनहार है।

इस प्रकार से चित्रगुप्त उस पापी अधिकारी को कहने लगा, प्रेमीपुरुष! तुम अपने दिल में से पापों को निकाल दो, तुमहारे सारे पाप बख्शे जाएंगे। वह सोचने लग पड़ा कि मैं अपना सब कुछ ही दान कर देता हूँ। चित्रगुप्त लिखने लग पड़ा। उसने बता दिया कि इस समय तेरे ख्याल शुभ हो रहे हैं।

महाराज जी बताया करते थे कि फिर उसने अपनी सारी जायदाद व पाप की कमाई जन साधारण में वितरित कर दी। इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी उपचार इसका नहीं हुआ करता है। अतः इस प्रकार के संस्कार होते हैं।

'चलता'

बाबाणियाँ कहानियाँ

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक सितम्बर, अंग - 30)

अतः अनेक महापुरुषों के साथ ऐसे चमत्कार होते ही रहते हैं। सन्त महाराज राड़े साहिब वालों ने जो उस समय घोर तपस्या कर रहे थे, सारी संगत को सम्बोधित करते हुये फ़रमान किया कि प्यारे! हमारे ऊपर वाहिगुरू जी ने महान कृपा की है कि इस अजेय माया में से निकाल कर हमें बन्दगी करने का समय बख्शा है। आप जी का भोजन, वस्त्र और रिहायश का वाहिगुरू जी को आप ही फिक्र है। उन्हें हमारी प्रालब्ध के अनुसार हमें कुली, जुली, गुली (रोटी, कपड़ा, मकान) बिना किसी उद्यम के देनी है। हमारा कर्तव्य है कि हम मन, चित्त, एकाग्र करके समय का पूरा पूरा ध्यान रखें और फुरने रहित होकर चरण कमल की मौज की प्राप्ति के लिए सदा ही अरदास में रहें तुम्हारी प्रारब्ध अपने आप ही आपके चरणों में पहुँच जाया करेगी, इस बात का फुरना नहीं करना। आवश्यकता है तो केवल हमें समय की सम्भाल करनी है। यह समय किसी के रोकने से रुका नहीं करता, यह अपनी तीखी चाल के साथ चलता रहता है, इस समय को सम्भाल लो। उड़ता जा रहा है, इसे ठहरने का पता नहीं है -

रही वासते घत्त 'समें' ने इक्क न मंनी,
फड़ फड़ रही धरीक 'समें' खिसकाई कंनी,
किवें न सक्की रोक अटक जो पाई भंनी,
त्रिक्खे अपणे वेग गिआ टप बंने बंनी,
हो! अजे संभाल इस 'समें' नूं,
कर सफल उडंदा जांवदा,
इह ठहिरन जाच न जाणदा,
लंघ गिआ न मुड़ के आंवदा।

डा. भाई वीर सिंह जी

समय बहुत कीमती है, किसी कवि ने लिखा है -

ओह वेला औंदा नहीं जो हथों गुआच गिआ।
ओह जोबन थिऔंदा नहीं जो पत्तरा वाच गिआ।
पाणी दरिआवां दे इक वार जो वहि गए ने।
नहीं औंदे मुड़ पत्तणां ते इउं दाने कहि गए ने।

और कबीर साहिब कहते हैं -

कबीर सूता किआ करहि उठि कि न जपहि मुरारि।
इक दिन सोवनु होइगो लांबे गोड पसारि॥

अंग - 1371

गुरू महाराज जी ने बाणी में फ़रमान किया है कि राम के प्यारे सन्त जन, अमृत बेला में उठ जाते हैं और चित्त वृत्ति एकाग्र करके चरण कमलों का ध्यान करते हैं और दिन निकलने तक अफुर अवस्था में प्रभु के साथ जुड़े रहते हैं। बाणी में फ़रमान है -

भिन्नी रैनड़ीऐ चामकनि तारे।
जागहि संत जना मेरे राम पिआरे।
राम पिआरे सदा जागहि
नामु सिमरहि अनदिनो।
चरण कमल धिआनु हिरदै
प्रभ बिसरु नाही इकु खिनो।
तजि मानु मोहु बिकारु मन का
कलमला दुख जारे।
बिनवंति नानक सदा जागहि
हरि दास संत पिआरे॥ *अंग - 459*

भाई वीर सिंह और लिखते हैं -

'कल्ल' चुकी है बीत वस तों दूर नसाई,
'भलक' अजे है दूर नहीं विच हत्थां आई,
'अज्ज' असाडे कोल विच पर फिकरां लाई,
'कल्ल' 'भलक' नूं सोच 'अज' इह मुफत गुआई,
हो! संभल संभाल इस अज्ज नूं,
इह बीते 'महां-रस' पींदिआं,
'हरि-रस' विच मत्ते, खीविआं
'हररंग' 'हरकीरत' चउंदिआं।

डा. भाई वीर सिंह जी

डा. भाई वीर सिंह जी - 'बिजलियों के हार' में समय की कद्र करने के लिये लिखते हैं -

'बीत गई' दी याद पई हड्डां नूं खावे,
'औण वाली' दा सहिम जान नूं पिआ सुकावे,
'हुण' दी छिन नूं सोच सदा ही खांदी जावे, -
'गई' ते 'जांदी', 'जाइ'
उमर ए वयरथ विहावे
'याद' 'सहिम' ते 'सोच' नूं
हे 'काल अकाल सदा' तुहीं!
त्रै काल भुल्ल तों कढ के
'हुण उची' विच टिका दईं।

डा. भाई वीर सिंह जी

भाई वीर सिंह जी इस जीव को सावधान करते हुये एक रुबाई में बताते हैं कि प्यारे! तू अपने कारोबार में व्यस्त है पर तुझे नहीं पता कि वाहिगुरू जी -

कालु बिआलु जिउ परिओ डोलै मुखु पसारे मीत॥
आजु कालि फुनि तोहि ग्रसि है समझि राखउ चीति।

अंग - 631

फरीदा दरीआवै कंन्है बगुला बैठा केल करे।
केल करेदे हंझ नो अचिंते बाज पए।
बाज पए तिसु रब दे केलां बिसरीआं।
जो मनि चिति न चेते सनि सो गाली रब कीआं॥

अंग - 1383

इसी आधार पर अपनी पुस्तक में अंकित करते हैं -

धोबी कपड़े धोंदिआ,
वीरा, हो हुशिआर!
पिछले पासयों आ रिहा मूँह अड्डी संसार।

डा. भाई वीर सिंह जी

इसी प्रकार सन्त महाराज जी ने तितिक्षा कर रहे प्रेमियों को फरमाया कि गुरू महाराज जी का अटल हुक्म सदा ही हृदय में बसाओ। किसी प्रकार की चिन्ता मत करो। वह स्वंय दाता है, उसने प्रारब्ध के अनुसार जरूरतमन्दों को भेजना ही भेजना है। गुरू महाराज जी का फ़रमान है -

नानक चिंता मति करहु चिंता तिसही हेइ।
जल महि जंत उपाइअनु तिना भि रोजी देइ।
ओथै हटु न चलई ना को किरस करेइ।
सउदा मूलि न होवई ना को लए न देइ।
जीआ का आहारु जीअ खाणा एहु करेइ।
विचि उपाए साइरा तिना भि सार करेइ।
नानक चिंता मत करहु चिंता तिस ही हेइ॥

अंग - 955

उस समय बहुत सारे प्रेमियों ने कठिन तप किया विशेष रूप से छोटे सन्त महाराज बाबा किशन सिंह जी इस कठिन मार्ग को सुमिरन तथा सेवा के बने हुये उड़न खटोले में बैठ कर अपना आत्म मार्ग तय करते रहे। उस समय यह उजाड़ बीयाबान ढक्की, नाम के अनहद नादों से गुंजारे भर रही थी और चलते चलते राहगीरों को दर्शनों के लिये आर्कषित कर रही थी। उस समय बहुत सारे वचन गाँवों में चलते ही रहते थे जिन्हें सुनकर नाम जपने का चाव आर्कषण जबरदस्ती हृदय को प्रभावित करता था। आकाश में से देवताओं का मात लोक में आना और महापुरुषों के दर्शन करके जीवन सफल करना, यह सभी कुछ गुप्त रूप में हो रहा था। भूतकाल में हो चुकी मुक्त आत्माओं का आशीर्वाद और दर्शन करने आना आम चर्चा का विषय बना हुआ था। चाहे उस समय मैं पांचवी में पायल हाई स्कूल में पढ़ता था पर घलोटी, घढ़ाणी, घपसा, बिलासपुर से प्रतिदिन आने वाले विद्यार्थियों से कोई न कोई बात सुन ही ली जाती थी। वह करनी कमाई की बातें सुनकर मन में एक आकर्षण पैदा होना। एक बार सुना कि महापुरुषों के चारों ओर एक फनियर नाग चक्कर लगा कर रक्षा करता है, कोई आदमी रात को उनकी कुटिया की ओर नहीं जा सकता। उस समय तो मैं इस हालत में नहीं था कि इन बातों का कोई निर्णय कर पाता केवल विश्वास ही करना पड़ता था पर होश-हवास में पूरी तरह से जवान हुआ और वहाँ दर्शन करने जाने वाले प्रेमियों से बात चीत करनी तो उन्होंने इन बातों की प्रौढ़ता करना। हमारे गाँव धमोट में से एक प्रेमी गुरदयाल सिंह दर्जी जिसे आम लोग गुल्ली कहा करते थे, वे राड़ा साहिब जाया करते थे। वह टेलर मास्टर थे। उसकी दुकान पर कपड़े सिलवाने वालों का काफी इकट्ठ हुआ करता था। उसकी दुकान के सामने एक-दो-अढ़ाई फुट चौड़ा काफी लम्बाँ चबूतरा था जिस पर आम लोग अपना फालतू समय बिताने के लिए पावों के बल बैठ जाया करते थे। चौकड़ी मार कर बैठना तो कोई जानता ही नहीं था। जब कभी गुल्ली की दुकान पर कपड़े लेने देने के लिये जाता तो देखता था कि गुरदयाल सिंह पैरों से चलने वाली मशीन से कपड़े सीता था। उसके पुत्र का नाम भजन सिंह था, वह ज़मीन पर ही फट्टा रख कर, उस पर मशीन रख कर, कपड़े सीता था। गुरदयाल सिंह के सामने एक बिना रंग के (**black & white**) फोटो लगी होती, उसमें एक बहुत ही सूक्ष्म जैसी हस्ती ने एक चार खानों वाली (फट्टेदार) चादर लपेटी हुई होती। वह बहुत ही गम्भीर नक्श वाली फोटो थी। वह आम तौर पर अपने आप

ही बताये जाया करता था कि देखो राड़े वाले सन्तों ने अपना हृष्ट-पुष्ट शरीर कैसे सुखा लिया। महात्मा बुद्ध की तरह केवल ढांचा ही कपड़ों में लपेटा हुआ नज़र आया करता था। जब उसने मुझे बताना कि भाई! देखो, राड़े वाले महापुरुष चाहे उम्र अभी बहुत कम है, 26-27 साल की उम्र में से गुज़र रहे हैं, उन्होंने इतनी तपस्या की है कि हड्डियों का ढांचा ही रह गये हैं। जब मैंने पहली पहली बार अपनी माता तथा और गाँव के प्रेमियों के साथ पूर्णमाशी जो एक दिन पहले मनाई जाती थी, जाकर कीर्तन सुना तो मैं यह देख कर हैरान हो गया कि महापुरुषों ने अपने चौगिर्दे लाईट पूरी तरह से बुझा दी थी। संगत के पीछे दूर से लाईटें चमक रही थीं उस समय उनके हृदय से प्यारा तथा दर्द भरा शब्द निकल रहा था। वह मुझे केवल पूरी तरह से याद ही नहीं पर मुझे भी प्रेरणा देता रहा। वे दो तीन शब्द थे जो वैराग में पूरी तरह से रूंधे हुये गले में से निकल रहे थे और श्रोताओं के दिलों को पार करते हुये एक आकर्षण भरी कम्पन पैदा कर रहे थे -

धारना - तन सुक के हड्डां दी मुट्ठी हो गिआ,
अजे वी ना रब्ब बहुड़िआ।
मेरे पिआरे, अजे वी ना रब्ब बहुड़िआ - 2, 2.
तन सुक के हड्डां दी मुट्ठी हो गिआ.....।

फरीदा तनु सुका पिंजरु थीआ
तलीआं खूंडहि काग।
अजै सु रबु न बाहुड़िओ
देख बंदे के भाग॥ *अंग - 1382*

इस धारना की चोट अभी सहन ही नहीं कर सके थे कि थोड़ी सी व्याख्या करने के उपरान्त उससे भी अधिक दर्द भरा दृश्य सामने आया जिसमें देखा कि एक कौए को कहते हैं कि पिंजर हुये शरीर में कुछ सांस बचे हुये तप कर रहे बाबा फरीद जी ने वचन किया -

धारना - ओ कागा! ए दोए नैणां मत छेड़िओ,
मैनूं पिर देखण दी आस - 2, 2
ओ कागा! ए दोए नैणां मत छेड़िओ.....॥

हरि हरि सजणु मेरा प्रीतमु राइआ।
कोई आणि मिलावै मेरे प्राण जीवाइआ।
हउ रहि न सका बिनु देखे प्रीतमा
मै नीरु वहे वहि चलै जीउ॥ *अंग - 94*

ऐसे विरहायुक्त हृदय में से निकले शब्द, सुनने वालों को किसी अगंमी रस में गोते लगवाया करते थे। लोग यह कहते सुने जाया करते थे कि भाई! चाहे इस महात्मा की शारीरिक आयु बहुत कम है पर इसके अन्दर की हूक इतनी प्रबल है कि कोयल की कूक भी फीकी प्रतीत होती है। जब आपने यह शब्द पढ़ना कि -

धारना - जिस तन लगीआं सोई तन जाणे,
किसे दी लग्गी कौण जाणदा।
मेरे पिआरे, किसे दी लग्गी कौण जाणदा।
जिस तन लगीआं सोई तन जाणे.....।

तो सुनने वालों के नेत्रों में से छमा-छम आसुओं की वर्षा होना शुरू हो जाया करती थी और हमारे जैसी मूर्ख अवस्था वाले भी विरह की वेदना को अनुभव करके रो रो कर कीर्तन श्रवण किया करते थे। उन आंसुओं के द्वारा बेअन्त किये गये पाप बह जाते थे तथा चित्त हल्का हल्का सा होकर कोई अजीब सा रस अनुभव किया करता था प्यारे! अब वह दिन बीत गये। ठीक ही कहा है -

इह ठहिरण जाच न जाणदा,
लंघ गिआ न मुड़ के आंवदा।

अब वह दिन किसी ने नहीं देखने। किसी के ऐसे भाग्य नहीं बनने जिनके कारण ऐसी प्रेमा युक्त हस्ती पुनः किसी को मिले। हम खुश्क हो चुके हैं, प्यार नाम की हमारे अन्दर कोई चीज़ ही न रही क्योंकि हम रसिया बन कर नहीं रह सके हमें ज्ञानी बनने का चाव अधिक था। हम ज्ञानी बन गये, जान लिया कि सभी जगह एक ही वाहिगुरू परिपूर्ण है। जानने से कुछ भी न हुआ। यह बात और ज्ञान के भण्डार में जमा कर ली पर बुझ (भेद) न सके। भेद जानने के लिये जानना निरर्थक हुआ करता है। भेद जानने के लिये उसी प्रकार के वातावरण की आवश्यकता है जो किसी प्रकार भी नहीं मिल सकता। आज हम माया के पीछे दौड़ रहे हैं, हम प्रत्यक्ष रूप में नहीं कह सकते।

सेज इकेली खरी दुहेली
मरणु भइआ दुखु माए।
हरि बिन नीद भूख कहु कैसी
कापड़ु तनि न सुखावए।
नानक सा सोहागणि कंती
पिर कै अंकि समावए॥ *अंग - 1108*

'चलता'

प्यारे की लालसा
श्री गुरू नानक देव जी तथा राए बुलार

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

हउ वारी वंञा घोली वंञा तू परबतु मेरा ओला राम॥
हउ बलि जाई लख लख लख बरीआ जिनि भ्रमु परदा खोला राम॥
मिटे अंधारे तजे बिकारे
ठाकुर सिउ मनु माना॥
प्रभ जी भाणी भई निकाणी
सफल जनमु परवाना॥
भई अमोली भारा तोली
मुकति जुगति दरु खोला॥
कहु नानक हउ निरभउ होई
सो प्रभु मेरा ओला॥ *अंग - 780*

साधु संगत जी! चित्त वृत्तियों को एकाग्र करो तथा नेत्रों के द्वारा गुरू स्वरूप का ध्यान करो, कानों के द्वारा गुरवाणी व विचारों को श्रवण करो, बुद्धि का प्रयोग करके विचारों को तौल कर हृदय में बसाने का प्रयत्न करो तथा जब बारी आए तो उच्च स्वर में बोलो। जब आप इस प्रकार करेंगे तो उसका फल कितना होगा -

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम॥
अंग - 546

कई करोड़ यज्ञों का फल प्राप्त हो जाएगा। मैंने पहले भी कई बार विनती की है, कोई भी व्यक्ति संसार में ऐसा नहीं है जो कि एक करोड़ यज्ञ को कर पाने में समर्थ हो क्योंकि यदि पैदा होने से लेकर प्रतिदिन एक यज्ञ करे और उसकी आयु सौ वर्ष की हो तो वह सारी जिन्दगी में छत्तीस हजार पांच सौ यज्ञ ही कर पाएगा। यदि उसकी आयु एक हजार वर्ष की हो तो वह लगभग तीन लाख 65 हजार यज्ञ कर पाएगा। यदि उसकी आयु दस हजार वर्ष की हो तो वह अपनी सारी आयु में तैंतीस लाख यज्ञ ही कर पाएगा। लेकिन साधु संगत जी! ये कई करोड़ यज्ञ तो हो ही न पाए? लेकिन इस कल्युग के अन्दर मैंने पहले भी विनती की थी कि श्री गुरू नानक देव जी, जो कि अकाल पुरुष का सगुण स्वरूप थे, उन्होंने अह आश्चर्यजनक रियायत प्रदान की है।

साधु संगत जी! वाहिगुरू जी के सगुण व निर्गुण दो स्वरूप होते हैं। निर्गुण स्वरूप तो वह होता है जिसे कोई नहीं जानता है। न तो वेद जानते हैं, न ब्रह्मा जानता है, न शिवजी जानते हैं, न देवियां जानती हैं। ये सब इसलिए नहीं जानते हैं क्योंकि वह अपने आप से ही है। अपनी महिमा में स्वयं ही स्थित होने के कारण वह स्वयं ही अपने आपको जानता है।

महिमा न जानहि बेद॥ ब्रहमे नही जानहि भेद॥
अवतार न जानहि अंतु॥ परमेसरु बारब्रहम बेअंत॥
अपनी गति आपि जानै॥ सुणि सुणि अवर वखानै॥
संकरा नही जानहि भेव॥ खोजत हारे देव॥
देवीआ नही जानै मरम॥ सभ उपरि अलख पारब्रहम॥
अंग - 594

उसे कोई भी नहीं जानता है, वह अपने आप ही होता है और जब अपने आपसे विस्तार में जाता है तो जो उसका सर्वाधिक श्रेष्ठ रूप होता है वह उसका सगुण स्वरूप ही होता है तथा उसे ऐकंकार कहते हैं। आप ध्यानपूर्वक श्रवण करना क्योंकि यह दर्शन की बात है तथा इस प्रकार की दार्शनिक बातें बहुत कम ही प्राप्त हुआ करती हैं।

जब वाहिगुरू एक से अनेक रूपों में हुआ तो सबसे पहले उसने -

निरंकार आकार होए एकंकार अपार सदाइआ।

ऐकंकार का रूप धारण किया वह उसका सगुण स्वरूप था। इसे इस प्रकार से समझ लें - मान लो एक राजा है, जब तक वह अपने महल में है तब तक वह अलग प्रकार से है, लेकिन जब वह कोर्ट में आ गया तो वह वहाँ पर आकर संविधान के अनुसार राज्य व प्रशासन को चलाता है। उसका पहला स्वरूप भी राजा ही है लेकिन उसका दूसरा स्वरूप क्रियाशील होता है। इसी प्रकार मान लो कोई व्यक्ति कार्यालय में जाता है तो अपने पदानुसार उसके अधिकार क्षेत्र की बात होती है, लेकिन जब वह घर में है तो उसकी बात में कोई दम नहीं होता है। इसी प्रकार से जब वाहिगुरू साकार रूप में आता है तो उसका जो सबसे पहले आकार बनता है, उसे १ओंकार कहते हैं। वह स्वयं ही अपने आप से ऐकंकार हो जाता है।

आपीनै आपु साजिओ आपीनै रचिओ नाउ॥
दुयी कुदरति साजीअै करि आसुणु डिठो चाउ॥
दाता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ॥
तूं जाणोई सभसै दे लैसहि जिंदु कवाउ॥
करि आसणु डिठो चाउ॥ *अंग - 463*

ऐकंकार से शब्द धुन ही होती है, वह जो शब्द धुन है, उसी को 'नाम' या 'ओंकार' कहते हैं।

प्रथम ओअंकार तिन कहा सो धुन पुर जगत मो रहा।

वह जो शब्द की धुन होती है, वह कभी भी खत्म नहीं हुआ करती है, उसी शब्द के द्वारा सारी रचना हुई है।

ओअंकारि ब्रहमा उतपति॥
ओअंकारु कीआ जिनि चिति॥
ओअंकारि सैल जुग भए॥
ओअंकारि बेद निरमए॥ *अंग - 930*

Time तथा space, ओंकार में से, शब्द में से उत्पन्न हुए हैं। शब्द में से, ज्ञान पैदा हुआ है, वेद जीव-जन्तु, ब्रह्म शक्ति, जोकि संसार का निर्माण कर रही है, वह पैदा हुई है। शब्द के अन्दर से ही शिवजी की शक्ति उत्पन्न हुई है। शब्द में से ही विष्णु जी तथा अनेकों देवी देवताओं व अवतारों आदि की शक्तियां व यह सारा दृश्यमान संसार उत्पन्न हुआ है। इस प्रकार से परमेश्वर का सर्वाधिक श्रेष्ठ स्वरूप उसका सगुण स्वरूप है और वह गुरू रूप में सारे संसार का उद्धार करने के लिए प्रकट होता है। ऐकंकार को हम जान नहीं सकते हैं क्योंकि उसका कोई रूप, रंग, रेख, भेष, चक्र, चिन्ह, जाति पात नहीं होती है। हम न तो उसके निवास स्थान के विषय में जानते हैं और न ही उसके गुणों के बारे में ही जानते हैं। इसीलिए परमेश्वर ने यह विधान बना दिया है (हमारे उद्धार के लिए) कि गुरू को अपना स्वरूप बनाकर संसार में भेज दिया है। गुरू नानक देव जी दसों गुरुओं के रूप में गुरू परमेश्वर ही हुए हैं। निःशंक संसार में गुरुओं की कोई कमी नहीं है, लेकिन गुरू परमेश्वर यही हुए हैं बाकी तो सब अध्यापक हैं, शिक्षक हैं। लेकिन अकाल पुरुष ने कहा हे नानक! मैं पारब्रह्म परमेश्वर और तुम गुरू परमेश्वर। अतः उस गुरू परमेश्वर ने हमारे लिए कल्युग के अन्दर कितनी सुगमता बना दी है।

समय बदलता रहता है, समय कभी भी एक रस नहीं रहता है। वातावरण के साथ मिलकर लोगों के ख्याल व विचार बदल जाते हैं। ज्यों-ज्यों ख्यालों में गिरावट आती है, त्यों-त्यों आचार्य, सन्त, साधू, महापुरुष लोग, जीवों के उद्धार के लिए अनेकों सरल मार्गों की तलाश करते रहते हैं, वे नई तकनीक का प्रयोग करते हैं ताकि किसी न किसी विधि से इनका उद्धार हो जाए। अब कल्युग का समय है। भारतीय ऋषियों मुनियों के अनुसार 17 लाख 28 हजार वर्ष के समय को, जबकि लोगों का आचार, आहार व व्यवहार शुद्ध था, सत्युग कहते हैं। उस समय लोग सत्य के जीवन को धारण करके पार हो जाया करते थे। उस समय लोग तपस्या बहुत करते थे।

लख वरिआं दी आरजा वकत गुजारन पिंनी साजे।

उस समय उम्र बहुत बड़ी हुआ करती थी लेकिन लोगों के मन में लालच नहीं था। लेकिन आज के युग में उम्र बहुत छोटी है, फिर जीवन में लालच बहुत अधिक है।

गहरी करि कै नीव खुदाई ऊपरि मंडप छाए॥
अंग - 692

आज तो बड़े-बड़े मकान बहुत गहरी गहरी नीवें रखकर बनाए जाते हैं। मनुष्य बहुत बड़े-बड़े इन्तजाम करता है। बड़ी-बड़ी बिल्डिगें बनानी हैं, तो उसकी बुनियादों को पक्का करना है ताकि कोई भूकम्प हिला न पाए। पहले जमानों में यह बात थी कि वे सोचते थे कि काल का तो कोई भरोसा है ही नहीं। क्या जानें यहां से कब चलना पड़ जाए। उनका रहना सादा था, खाना पीना सादा था। मारकण्डेय ऋषि की आयु बहुत अधिक थी। यदि किसी ने उन्हें कहा कि महापुरुषो! आप मकान आदि बना लो तो वे जवाब दे देते थे कि किसलिए बनाना है, चार दिन की तो जिन्दगानी है।

मारकंडे ते को अधिकाई
जिनि त्रिण धरि मूंड बलाए॥ *अंग - 692*

वह एक छपरी डाल लिया करता था और उसी में दिन काट लिया करता था। समय बदल गया। बारह लाख छियान्नवे हजार वर्षों के आदमियों के ख्याल को एक कोष्ठक में बन्द किया गया। इसे त्रेता युग का नाम दिया गया। इसके बाद पुनः आठ लाख 64 हजार वर्ष के आदमियों को एक समय में बांधा गया और इसे द्वापर युग का नाम दिया गया। इसके बाद कल्युग की बारी आई है। इसके काल को चार लाख बत्तीस हजार वर्षों के समय को बांधा गया लेकिन महापुरुषों का यह मत है कि चार लाख बत्तीस हजार वर्षों तक आबादी नहीं रह पाएगी। लोगों के ख्याल बहुत दूषित हो जाएंगे। वातावरण अत्यन्त अशुद्ध हो जाएगा। हवा के अन्दर गैसों की बेहद मिलावटें हो जाएंगी। इसके अतिरिक्त इस युग में, पापों का साम्राज्य माना गया है। लेकिन सौ वर्ष तक बहुत कम लोग ही पहुँच पाते हैं। साठ वर्ष की उम्र तक ही अधिकांश लोग संसार को अलविदा कह जाते हैं। पूर्व काल में मां बाप के रहते हुए कभी बच्चों की मृत्यु नहीं हुआ करती थी। क्योंकि उस समय लोग तप साधना में लीन रहते थे लेकिन अब कल्युग में वातावरण ही ऐसा है कि तप साधना कर पाना अत्यन्त मुश्किल है। अब प्रश्न यह है कि

अब हम करें क्या? क्योंकि हमें कल्युग में भेज दिया गया है। हम स्वयं तो आए नहीं हैं। हमारी मनुष्य बनने की बारी आ गई और कल्युग में जन्म मिल गया। गुरू जी कहते हैं कि तुम घबराओ मत। तुम्हारे लिए रास्ते को हम और आसान बना देते हैं। यथा -

एक चित जिह इक छिन धिआइआ
काल फास के बीच न आइओ।

अब कितनी रियायत प्रदान कर दी गई है। यदि एक बार भी वाहिगुरू का ध्यान आ जाए तो उसकी फांसी काट दी जाएगी। यदि कल्युग में थोड़ी सी भी सेवा कर ली जाए, तो उसका बहुत बड़ा फल मिल जाया करता है। पूर्व के युगों में इतना फल नहीं मिला करता था, लेकिन कल्युग में नाम जप करने का बहुत बड़ा फल मिलता है। गुरू जी ने ऊँचे स्वर में बताया -

अब कलू आइओ रे॥ इकु नामु बोवहु बोवहु॥
अन रूति नाही नाही॥ मतु भरमि भूलहु भूलहु॥
अंग - 1185

अतः ये वचन याद कर लो, यह बहुत काम आने वाले हैं। कल्युग का समय है, इसके अन्दर नाम की खेती बहुत प्रफुल्लित होगी। बस यह 'नाम' किसी को मिल जाए। गुरू जी कहते हैं -

साई नामु अमोलु कीन म कोई जाणदो॥
जिना भाग मथाहि से नानक हरि रंगु माणदो॥
अंग - 81

युगों की कीमत थी, पुण्यों की कीमत थी, ब्रह्मज्ञानी के द्वारा कोई पुण्य कर दिया, पूर्ण महात्मा के द्वारा कोई पुण्य कर दिया तो वह लाखों गुणा फैल जाया करते हैं लेकिन कीमत तो है ही थी। कल्युग के अन्दर जो पुण्य है, वह है, हरि का यश करना तथा नाम का जप करना-

कलि महि एहो पुंनु गुण गोविंद गहि॥ अंग - 962

तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु॥
नानक निहफलु जात तिह जिउ कुंचरु इसनानु॥
अंग - 1428

अहंकार तो उसे स्वाभाविक रूप से आना ही है, गुरुद्वारा बना लेंगे उसके बाद अहंकार आ जाएगा कि मैंने बनाया है। फिर यदि उसे मुख्य पद से हटा दिया तो तनाव में आ जाएगा कि मेरी कद्र ही नहीं की इन लोगों ने। जब मैं बना रहा था तो कोई पास में नहीं आता था लेकिन अब ये लोग मुझसे पद भी छीन रहे हैं। इसी को कहते हैं कि यह सब निरर्थक हो गया। एक महान पुण्य है इस युग में वह है जिसे आप सब कह रहे हो, कल्युग के अन्दर बड़ा पुण्य उसका गुणगान करना ही है। इसकी कीमत इतनी है कि इसका हिसाब किताब रखना ही कठिन है। न तो 'नाम' की कीमत को कोई आंक सका है और न ही परमेश्वर की कीमत को। अब आप ही समझ लो कि सेवा करने का फल कितना है। मुझे अभी थोड़े दिन पहले संगत में से किसी ने बताया कि हम लोग राड़ा साहिब गए थे, वहाँ पर एक भूत बोल रहा था। वह भूत कहने लगा, देखो! तुम्हें मैं एक बात बताता हूँ, भूत तो मैं बन गया हूँ क्योंकि मेरे कर्म बुरे थे परन्तु मैं तुम्हें एक बात बताता हूँ - मैंने केवल इतना ही पुण्य किया था कि जब हमारे गांव में एक महात्मा पहुँचे तो वहां पर भीड़ बहुत ज्यादा हो गई थी और मैंने आगे होकर उन्हें रास्ता दिलवा दिया। लोगों को दूर हटा दिया कि इन्हें निकल जाने दो। उसका पुण्य इतना हुआ कि, जब यमदूत मुझे लेने के लिए आए तो वे कहने लगे इसे मारना नहीं है। वे बोले इसे मारना क्यों नहीं है? तो दूसरे बताने लगे कि इसने भीड़ के अन्दर रास्ता देकर सन्त जी को पार निकलवाया था। वह (भूत) बोला उसका पुण्य मुझे यह मिला कि मुझे यमदूतों की मार नहीं पड़ी। क्योंकि गुरू जी यह बात कहते हैं -

जे को जीउ कहै ओना कउ
जन की तलब न होई॥ अंग - 1328

यदि कोई व्यक्ति महापुरुषों को केवल सम्मानपूर्वक 'जी' कहकर बुला भी लेता है तो यमदूत उसे मारते पीटते नहीं हैं। अब यह कितना बड़ा पुण्य है! अतः ऐसा ही महान पुण्य नाम जप करने का है।

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ॥ ता दरगह बैसणु पाईऐ॥
कहु नानक बाह लुडाईऐ॥ अंग - 26

जब हम सेवा करते हैं तो उसका पुण्य दरगाह में यह मिलता है कि इसे दरगाह में स्थान मिल जाता है। कल ही मैं कह रहा था कि यहाँ पर सेवा चल रही थी, मेरे मन में हिसाब-किताब सा लगाने की बात आई। मैंने कहा आठ बजे से प्रेमीजन आए हैं (सारे पुरुष स्त्रियां व बच्चे) इन्होंने क्षण मात्र के लिए भी दम नहीं लिया है। न तो ये रुके हैं और न ही इनकी गति धीमी पड़ी है। जितनी गति प्रातःकाल में थी, उतनी ही गति इनकी अब है (दो बजे, दोपहर) छः घंटे सेवा करते हुए बीत गए थे। छोटी-छोटी बच्चियां थीं, उनमें से किसी ने भी थकान को अनुभव नहीं किया। मैं हैरान हो रहा था। मैंने अनुमान लगाया कि यही मान लो कि ये एक घंटे में दो कि. मी. चली हैं, तो छः घंटे में बारह कि. मी. चले गए। सिर के ऊपर वजन रखा है। यह सहज गति में सेवा हुई है। मैंने कहा, बेटा! तुम थक तो नहीं गई? वे बोलीं नहीं पिता जी! हमें तनिक भी थकान नहीं हुई है। मैंने कहा आज तुम लोग बारह-बारह कि. मी. गुरू की सेवा में चली हो। मैंने अनुमान लगाया है कि तुम्हारा दरगाह का लगभग दस-

बारह कि. मी. का रास्ता साफ हो गया है। यह जो सड़क की सेवा की है, पता नहीं किस ब्रह्मज्ञानी के चरण इस सड़क पर पड़ेंगे। जिन लोगों ने सिरों के ऊपर उठा-उठा कर पत्थर डाले हैं, सड़कें बनाई हैं, मिट्टी ढोई है, तप्त धूप के अन्दर सेवा की है, उनके पुण्यों का तो कोई हिसाब किताब ही नहीं रहेगा। मैंने कहा तेरह करोड़ मील से भी अधिक का उनका मार्ग (परलोक का) इस सड़क के माध्यम से साफ हो गया होगा। यह सेवा दरगाह में जाकर फलीभूत होती है। वहाँ पर स्थान मिल जाया करता है। अतः इस प्रकार से तुम लोग सत्संग में बैठे हो, तुम लोग एक बहुत महान यज्ञ में बैठे हो। गुरू जी कहते हैं -

कई कोटिक जल फला सुणि गावनहारे राम॥

अंग - 546

अतः उस गुरू का, जो गुरू परमेश्वर है, उसका हम लोग यशगान कर रहे हैं।

श्री गुरू नानक देव जी संसार का उद्धार करते हुए आज ऐमनाबाद में भाई लालो जी के पास रह रहे हैं। आपने ऐसी वृत्ति धारण की हुई है कि रोड़ियों का आसन बना लिया है और उसके ऊपर बैठ जाते हैं तथा सारा दिन उसी के ऊपर बैठकर तप साधना में लीन रहते हैं। भाई बाला जी को तो आपने पहले ही भेज दिया था। मरदाना को भी आपने कहा, कि तुम भी तलवंडी जा आओ तथा परिवार की खबर लेने के बाद वापिस आ जाना। फिर हम लोग आगे जाने का कार्यक्रम बनाएंगे। भाई मरदाना जी तथा भाई बाला जी तलवंडी आ जाते हैं। वहाँ पर महिता कालू जी को पता चलता है कि ये लोग (गुरू) नानक के पास से आए हैं। उस समय भाई बाला जी पहले पहुँचे तो कालू जी ने उसे बुलाया और पूछा, भाई बाला! तुम्हें नानक के साथ भेजा था, वे मोदीखाने की सेवा करते थे, तुम उनका हाथ बंटाते थे, कोई खबर सुनाओ? नानक का क्या हाल है?

भाई बाला कहने लगा, महिता जी! गुरू नानक की महिमा तो कहने सुनने से बाहर की बात है। उसकी क्रिया अगम है, उसे मैं शब्दों के द्वारा कथन करने में सक्षम नहीं हूँ। इस प्रकार से कथन है -

सतिगुर पुरखु अगंमु है निरवैरु निराला।
जाणहु धरती धरमु की सची धरमसाला।
जेहा बीजै सो लुणै फल करम समाला।
जिउ करि निरमलु आरसी जगु वेखणि वाला।
जेहा मुहु करि भालीऐ तेहो वेखाला।
सेवक दरगह सुरखरू वेमुखु मुहकाला॥

भाई गुरदास जी, वार 34/1

आप नानक का हाल पूछते हैं, लेकिन उसे बता पाना असम्भव है। वे (नानक के पिता जी) कहने लगे, बाला! अनजानों की तरह से बात न करो, मैं तुमसे पूछ रहा हूँ, कि नानक का क्या हाल है? तुम तो अलग प्रकार की कहानियां सुनाने लग गए हो। बाले ने कहा, जी! वह तो कुलों का उद्धार करने के लिए आया है। महिता कालू जी कहने लगे, ऐ मूर्ख जट्ट! तुम मुख्य बात बताते ही नहीं हो। बाले ने कहा, यदि तुमने पूछना ही है तो अपनी लड़की व दामाद को पूछ लो। वे ठीक ढंग से बता पाएंगे। मैं तो गुरू नानक के साथ हूँ, मैंने तो अपनी खेती-बाड़ी भी छोड़ी हुई है। कितने ही वर्षों से मैं उनके साथ रह रहा हूँ, सेवा कर रहा हूँ और तुम मुझे उल्टा ही डांटने लग पड़े हो। इतना कहकर बाला तो चुप हो गया और अपने घर चला गया। थोड़े दिनों के बाद भाई मरदाना को गुरू महाराज जी ने भेजा कि भाई मरदाना! तुम जाओ! तुम्हारे साथ, पिता श्री लड़ेंगे जरूर, लेकिन तुम गुस्से मत होना। सही-सही बता देना जो कुछ हुआ है। क्योंकि पिता जी का स्वभाव बचपन से ही लड़ने-झगड़ने वाला है। वे प्रायः उल्टी सीधी बातें करने लग पड़ते हैं। यदि प्रेम से सुनेंगे तो बता देना अन्यथा चुप कर जाना।

भाई मरदाना महिता कालू जी के पास पहुँच जाता है क्योंकि उसने तो स्वभाविक रूप से जाना ही था। अतः उसने जाकर दुआ सलाम की। महिता जी ने पूछा, नानक जी का क्या हाल है? मरदाना बोला, महिता जी! वह तो खुदा का कोई रूप आया हुआ है। वह संसार का उद्धार करने वाला अल्लाह का रूप आया है। महिता जी बोले, मरदाना! मैं तुमसे नानक का हाल-चाल पूछ रहा हूँ और तुम और तरह की बातें करने लग पड़े हो। पहले वाले को पूछा तो वह भी इसी तरह की बातें करता था। मरदाने ने कहा, महाराज! आप मानो या न मानो गुरू नानक को समझ पाना बहुत मुश्किल है। मैं एक पंक्ति में यदि कहूँ तो परमेश्वर मनुष्य के रूप में (नानक रूप में) प्रकट हुआ है। उनकी लीलाएं विलक्षण हैं। महिता कालू जी नाराज हो गए। वे कहने लगे, नानक तो बिगड़ा हुआ था ही, उसने इन्हें भी अच्छी तरह से बिगाड़ दिया है। ये मुझे आकर बताते हैं कि वह कुलों का उद्धार करने आया है। यह नहीं बताते हैं कि धनोपार्जन करके देगा। इसके बाद वे (महिता कालू जी) बोले, उसने कोई रुपया-पैसा भी कमाया है? भाई मरदाना ने कहा, जी! रुपया-पैसा? रुपया पैसा तो उसके आगे पीछे घूमता है। वह तो सारी दुनियां को धन, अन्न प्रदान कर रहा है। महिता जी! आप केवल उसे पुत्र ही मत समझो, वह तो सारी सृष्टि का स्वामी है। महिता जी बहुत नाराज हुए। इसके बाद राय बुलार जी को पता चला कि भाई मरदाना जी तथा भाई बाला जी आए हुए हैं। उसके मन में बहुत चाव जागृत हुआ क्योंकि गुरू नानक को सर्वाधिक प्यार दो लोगों ने ही किया है, एक थी बेबे नानकी और दूसरे थे राय बुलार जी। बेबे नानकी जी

को पूर्व जन्म से ही ज्ञान था कि मेरा भाई (नानक) पारब्रह्म परमेश्वर संसार का उद्धार करने के लिए आया है। वह सब कुछ जानती थी लेकिन चुप रहती थी। इसीलिए जब यह शोर पड़ा कि नानक बेईं नदी में डूब गया है तो वह बोली, मेरा भाई बेईं नदी में डूब जाएगा? वह तो डूबे हुए संसार को पार लगाने के लिए आया है। तुम लोग किस प्रकार की बातें करते हो? सब लोग रो रहे थे लेकिन बेबे नानकी नहीं रो रही थी। वह चुप थी, वह सबको धैर्य प्रदान कर रही थी। दूसरा व्यक्ति था - राय बुलार। राय बुलार ने नानक को बचपन से पहचान लिया था। उसी समय से उसके मन में अथाह श्रद्धा भावना थी। उसने कई बार महिता कालू जी से कहा कि तुम वैसे ही क्लेश करते हो, तुम्हें अपने बच्चे की महिमा को समझना चाहिए। तुम्हें जितने धन की आवश्यकता होती है वह मुझसे ले जाया करो। लेकिन नानक को तंग न किया करो। यह तो अल्लाह का रूप तथा मेरा मुर्शिद है। जिस प्रकार से मुर्शिद व मुरीद का प्यार होता है, ठीक उसी प्रकार से राय बुलार का नानक के साथ था, वे उन्हें अथाह प्रेम करते थे, उन्होंने नानक को सुल्तानपुर लोधी भेज तो दिया था लेकिन कोई दिन ऐसा नहीं था जबकि वे नानक को याद करके आंसू न बहाते हों। उसके मन में गुरू नानक के प्रति अथाह आकर्षण था कि गुरू नानक देव जी आ जाएं और मुझे उनके दीदार हो जाएं।

अत: आज जब उसे पता चला कि भाई बाला तथा भाई मरदाना जी गुरू नानक देव जी के पास से आए हैं तो वे कहने लगे कि भाई मरदाना जी को बुलाओ। भाई बाला जी को बुलाओ। दोनों को बुलाया गया। कहने लगा ऐ प्रियजनो! कृप्या हमें यह बताने का कष्ट करो कि आप लोग मेरे प्यारे गुरू नानक को किस हाल में छोड़कर आए हो? वे बोले, राय बुलार जी! जब गुरू नानक देव जी आपके पास से गये थे और जब उन्होंने नवाब दौलत खां लोधी के साथ मुलाकात की तो नवाब जी ने कहा कि इस प्रकार का खुदा का रूप मैंने कभी नहीं देखा है। यह व्यक्ति नहीं है बल्कि खुदा का रूप ही है। यह तो मेरा प्रधानमन्त्री बनने के योग्य है।

उन्होंने गुरू नानक को कहा कि मैं तुम्हें अपना सबसे बड़ा मन्त्री बनाना चाहता हूँ। लेकिन गुरू जी ने कहा नहीं मैं तो सेवा करने वाला कार्य लेना चाहता हूँ। उस समय आठ वजीर हुआ करते थे, जिसमें से एक वजीर को मोदी कहते थे, जो प्रत्येक स्थान पर राशन पहुँचाता था। एक खाना-ए-खाना हुआ करता था, जिसे गृह मन्त्री के सदृश्य जाना जा सकता है। एक वजीर-ए-आजम (प्रधानमन्त्री) होता था। एक होता था दीवान जैसे कि आजकल फाइनैंस मिनिस्टर होते हैं। एक बख्शी होता था जैसे कि रक्षा मन्त्री होता है। इस प्रकार से मरदाना ने कहा कि उन्हें बहुत अच्छे पद वाली जगह मिली थी लेकिन वे अपने हाथों से ही कार्य करना बेहतर समझते थे, वहाँ पर उनकी बहुत प्रतिष्ठा हुई। बहुत साधू, सन्त, पीर, फकीर उनके पास आना शुरू हो गए। सबको राशन, सब डेरों को राशन, सबके ठिकानों पर राशन, बखूबी पहुंचने लगा था। सबके अन्दर बहुत विशाल खुशी फैल गई कि इस प्रकार का ईश्वर तुल्य इन्सान पहले कभी देखा नहीं था, इसके साथ ही कभी उन्हें घाटा भी नहीं पड़ता था।

अन्त में गुरू नानक देव जी ने परमेश्वर के हुक्मानुसार बेईं नदी में डुबकी मारी तथा तीन दिनों तक शोर पड़ता रहा कि गुरू नानक डूब गया है। बेबे नानकी ने कहा कि मेरा भाई डूबा नहीं है, वह तो संसार को पार लगाने वाला है। वह डूब नहीं सकता है। जब तीन दिन बीत गए तो नवाब ने जाल डलवाया कि किसी तरफ नानक को (मृत रूप में) निकाला जा सके। लेकिन गुरू नानक देव जी ऊपर की तरफ निकल कर श्मशान भूमि में बैठ गए तथा आप एक ही बात कहते रहे, ना कोई हिन्दू ना मुसलमान। या फिर आप कुछ भी बोलते नहीं हैं बल्कि चुपचाप समाधि में बैठे रहते हैं। अन्त में यह शंका पैदा हो गया कि इन्हें किसी भूत प्रेतादि ने पकड़ लिया है। एक मुल्ला को भेजा गया, जिसने बहुत से मन्त्र फूँके। वह कहता रहा कि मैं तुम्हें निकाल कर छोड़ूँगा। मुल्ला कहने लगा भूत बहुत कड़ा है, वह बोलता नहीं है लेकिन मैं बुला कर ही छोड़ूँगा। उसने एक धूप सुलगा दी जो कि बहुत बदबूदार होती है और उसका धुआं नानक के नाक में देना शुरू कर दिया। गुरू जी ने नेत्र खोले तथा थोड़े से वचन किए। उसके कारण मुल्ला ने सिजदा कर दिया तथा वह उनका मुरीद बन गया। उसने बताया नवाब साहिब! नानक को किसी भूत प्रेतादि ने नहीं पकड़ा है। वे तो समाधि में बैठे हैं। उस समय निन्दा करने वालों ने नवाब के पास शिकायत की महाराज! इसने घाटा पड़ जाने के कारण यह पाखण्ड किया है। नवाब ने जांच के लिए कमेटी का गठन कर दिया।

जिस समय जांच पूरी हुई तो गुरू नानक देव जी के 762 रुपए नवाब की ओर अधिक निकले। यह उस समय की बात है जबकि एक रुपए के चार कुन्तल चने आया करते थे अर्थात गुरू जी के 76,000 रुपए अधिक निकले। गुरू नानक को पूछा कि इस रकम का क्या करें? उन्होंने कहा कि इसे गरीबों व साधू सन्तों के बीच बाँट दो। क्योंकि मुझे तो पैसे की कोई जरूरत ही नहीं है। उस समय मूल चन्द (गुरू नानक का ससुर) आ गया। उसने मुकद्दमा कर दिया

कि इस रकम पर गुरू नानक के बच्चों का हक है। यह साधू सन्त को नहीं दिया जाना चाहिए। नवाब ने अपनी तरफ से फैसला कर दिया कि आधा बच्चों को दे दो तथा आधा साधुओं में बांट दो। बाला ने आगे बताया कि राय साहिब! इसके बाद गुरू नानक देव जी वहां पर टिके नहीं और मैं तो उसके बाद आ गया था। इसके आगे का हाल भाई मरदाना को पता है। मरदाना ने बताया, राय साहिब! इसके बाद नानक ने साधुओं वाला रूप धारण कर लिया। सब कपड़े आदि उतार दिए। दो चद्दरें धारण कर लीं। एक दस्तार सिर पर रख ली तथा दूसरी को अधोवस्त्र के रूप में बांध लिया एवं बड़ा सादा सा रूप बनाकर आप ने प्रस्थान कर दिया और चलते-चलते आप ऐमनाबाद पहुँच गए। मैं भी वहाँ रहा और वहाँ पर काफी मुश्किल भी रही लेकिन गुरू नानक देव जी रोड़ियों के आसन पर बैठे रहते थे। भाई लालो के पास आप जी निवास रखते थे। वहाँ पर आपकी बहुत निन्दा भी हुई कि यह तो डोम जाति के आदमी को अपने साथ लिए घूम रहा है। उसके बाद आपको मलक भागो ने आपको बुलाया कि आप मेरे यज्ञ में शामिल हों। गुरू नानक देव जी जब वहाँ पर गए तो उसने कहा कि हमने तुम्हें भोजन खिलाना है। गुरू नानक देव जी बोले, अरे बन्धु! यदि जरूरत न हो तो क्या जबरदस्ती खिलाना है? इस प्रकार की बहुत सी लीलाएं गुरू जी ने कीं। राय साहिब! इससे पहले नवाब दौलत खां गुरू नानक के प्रति इतना प्रभावित हुआ कि वह उन्हें साथ लेकर नमाज पढ़ने चला गया। गुरू नानक ने उन्हें बताया कि नमाज को इस प्रकार से नहीं पढ़ना चाहिए क्योंकि जब तक मन ही साथ नहीं दे रहा है तब तक नमाज व पूजा का कोई लाभ नहीं है। वहाँ पर गुरू नानक ने उन्हें उपदेश दिया कि-

प्रभु की उसतति करहु संत मीत॥
सावधान एकागर चीत॥ *अंग - 295*

राय बुलार ने कहा भाई मरदाना! यह घटना किस प्रकार से घटित हुई, कृप्या मुझे सविस्तार बताओ। मरदाना ने बताया राय बुलार जी! जिस समय गुरू जी श्मशान घाट में बैठे थे, तो आप एक बात कह रहे थे कि ना को हिन्दू ना मुसलमान।

ना हम हिंदू न मुसलमान॥
अलह राम के पिंडु परान॥ *अंग - 1136*

यह बात नवाब को बताई गई कि वह तो सारे नियमों व मर्यादाओं की धज्जियां उड़ा रहा है। यह ठीक है कि हिन्दू, हिन्दू न हो लेकिन मुसलमान तो मुसलमान हैं। वे रोजे रखते हैं। नमाजें अदा करते हैं, फिर यह कैसे, कोई कह सकता है कि मुसलमान, मुसलमान नहीं हैं। उस समय इस्लाम वालों का राज्य था और इस्लाम के नियम ही थोपे हुए थे। कुरान शरीफ के अनुसार नियम चलते थे, अतः स्वाभाविक था कि गुरू नानक को दरबार में तलब किया जाता। गुरू नानक की पेशी हुई और नानक ने नवाब को सन्तुष्ट करवा दिया -

पंजि निवाजा वखत पंजि पंजा पंजे नाउ॥
पहिला सचु हलाल दुइ तीजा खैर खुदाइ॥
चउथी नीअति रासि मनु पंजवी सिफति सनाइ॥
करणी कलमा आखि कै ता मुसलमाणु सदाइ॥
नानक जेते कूड़िआर कूड़ै कूड़ी पाइ॥ *अंग - 141*

वे कहने लगे कि यदि पांच नमाजें पढ़नीं हैं तो इस प्रकार से और यह भावना रखकर पढ़ो, वहाँ पर बहुत प्रकार के वचन हुए। कुरान शरीफ के हुए। गुरू नानक ने सबको निरुत्तर कर दिया। नवाब दौलत खां इतना दीवाना हुआ कि उसने कह दिया कि वास्तव में ही न तो यह हिन्दू है और न ही मुसलमान है यह तो अल्लाह का रूप ही है।

गुरू नानक को पूछा गया, हे नानक! तुम्हारी दृष्टि में हिन्दू व मुसलमान में से कौन अच्छा है। गुरू नानक ने कहा, नवाब साहिब! जाति का कोई सम्बन्ध नहीं होता बल्कि वहाँ पर तो प्रायोगिक जीवन का महत्व है। अच्छे कर्म करने वाला अच्छा है और बुरे कर्म करने वाला बुरा है। जाति का तो कोई प्रश्न ही नहीं पैदा होता है।

अगै जाति न जोरु है अगै जीउ नवे॥
जिन की लेखै पति पवै चंगे सेई केइ॥ *अंग - 141*

आगे (दरगाह में) जाति की गणना नहीं होगी बल्कि वहाँ पर कर्मों का ही फल होगा।

नानकु आखै रे मना सुणीअै सिख सही॥
लेखा रबु मंगेसीआ बैठा कढि वही॥
तलबा पउसनि आकीआ बाकी जिना रही॥
अजराईलु फरेसता होसी आइ तई॥
आवणु जाणु न सुझई भीड़ी गली फही॥
कूड़ निखुटे नानका उड़कि सचि रही॥ *अंग - 953*

गुरू जी ने बताया, नवाब साहिब! वहाँ न तो कोई हिन्दू पार हो सकता है और न ही कोई मुसलमान पार हो सकता है। दरगाह के अन्दर उसका ही मूल्य पड़ता है, जिसने गुनाहों से तौबा कर ली हो और नेक कार्य करते हों। जिसके कर्म अच्छे हैं, वह बड़ा है और जिसके कर्म बुरे हैं, वह छोटा ही है। इसके बाद नवाब ने पूछा, नानक! मस्जिद तथा मन्दिर में क्या फर्क है? वे बोले दोनों परमेश्वर का नाम लेने वाले स्थान हैं, दोनों ही पूज्यनीय हैं, दोनों का ही सम्मान होना चाहिए।

'चलता'

आत्म ज्ञान

सन्त वरियाम सिंह जी
सम्पादक - प्रो. गुरदेव सिंह

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जुलाई, पृष्ठ - 36)

यह भी सवाल है कि क्या बिछुड़े हुए मिल भी जाते हैं या नहीं? महाराज जी कहते हैं कि शब्द का मिलाप तो हो जाता है शरीर का नहीं हो पाता है। आत्माओं का मिलाप दोबारा मिलाप नहीं हो पाता है, जो बिछुड़ गया, बस बिछुड़ गया। समुद्र की लहरें उठती हैं यदि पिछली लहरें कहें कि हम आगे वाली लहरों को मिल लें तो यह हो नहीं सकता है क्योंकि आगे वाली लहरें तो समुद्र के तट पर आकर पुनः पानी ही बन जाती हैं।

वास्तविकता यह है कि जो अज्ञानमयी शरीर हैं जीवात्माएँ हैं, उन्हें हम जानते नहीं हैं, रंग, रूप नहीं जानते हैं कि मैं किस प्रकार का हूँ। शीशे के आगे खड़े होकर हम देख लेंगे कि यह हमारा शरीर है लेकिन इसके अन्दर जो चीजें रहती हैं, उन्हें हम जानते नहीं हैं, हमारे ऊपर अज्ञानता की भूल पड़ी हुई है। वह इसलिए है क्योंकि हम स्वयं को जानते नहीं हैं और न जानने के कारण दुखी हो रहे हैं। हमारी जो सुरति है वह रसायनिक है। इलैक्ट्रानिक और मैग्नेटिक लहरों के कारण दिमाग जीवित रहता है यदि वे लहरें रुक जाएँ तो दिमाग मर जाता है। इसके साथ यह भी बात है कि जो हमारी असली सुरति है, उसके बारे में हमें तनिक सा भी ज्ञान नहीं है। यही कारण है कि हमें समर्थ गुरू को मिलकर अपनी असली सुरति तक पहुँचने का यत्न करना चाहिए।

तिथै घड़ीऐ सुरति मति मनि बुधि ॥
तिथै घड़ीऐ सुरा सिधा की सुधि ॥ ***अंग - 8***

कहि कबीर बुधि हरि लई मेरी
बुधि बदली सिधि पाई ॥ ***अंग - 339***

जब असली सुरति तक हमारी पहुँच हो जाती है तो फिर हमारे अन्दर सिद्धि आ जाती है यानि कि फिर हमारी तीसरी आँख खुल जाती है, हमारी दृष्टि ही कुछ और हो जाती है, फिर तो हमें कण-कण में व्याप्त परमात्मा दिखाई पड़ने लग जाता है। अब पता चल गया कि यहाँ पर परमात्मा के बिना दूसरा कोई है ही नहीं। आँखें तो निःशंक रूप से वही होती हैं, लेकिन अपने अन्दर के अनुभाव का प्रकाश हो जाने के कारण दृष्टि में अन्तर पड़ जाता है। इसीलिए महाराज जी कहते हैं कि प्रेमीजनो! अपने जन्म को यूँ ही व्यर्थ में बरबाद मत करो, अपनी मैं और मेरी वाली सुरति का त्याग करके अपनी मंजिल की तरफ आगे बढ़ो। यथा -

गुरहि दिखाइओ लोइना ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
ईतहि उतहि घटि घटि घटि घटि
तूंही तूंही मोहिना ॥ ***अंग - 407***

भोलिआ हउमै सुरति विसारि ॥ ***अंग - 1168***

आओ! महाराज जी के चरणों में विनती करें कि महाराज जी! यदि कैंसर के मरीज को डाक्टर कहे कि तुम कैंसर की बीमारी को पूर्णतः भूल जाओ तो यह तो उसके वश के बाहर की बात है। इसी प्रकार से यदि हमारे वश की बात हो तो इतने वचन सुनकर हमें भी ज्ञान हो जाए। हम तो अपनी हउमै वाली मैं भूल ही नहीं पाते हैं, कृप्या हमें इसका कोई ढंग बताने की कृपा करें। गुरू जी कहते हैं कि नाम के बारे में तुम्हें ज्ञान न होने के कारण ही ऐसा हो रहा है। सबसे पहले तो सारी प्रकृति में, सारी सृष्टि में ऐसी वस्तु की तलाश करो जिसे खाकर यह बीमारी दूर हो जाए। गुरू जी कहते हैं कि -

अंम्रित नामु सदा सुखदाता
अंते होइ सखाई ॥
बाझु गुरु जगतु बउराना
नावै सार न पाई ॥ ***अंग - 1287***

यहाँ पर तीन चीजें आ गईं। एक नाम है, एक गुरू है और एक हउमै है। जो वास्तविक चिकित्सक है वह गुरू है। गुरू के पास ही नाम होता है क्योंकि नाम प्रदान करने वाला गुरू के सिवाए अन्य कोई दूसरा होता ही नहीं है। यथा -

बिनु सतिगुर नाउ न पाईऐ
बुझहु करि वीचारु ॥
नानक पूरै भागि सतिगुरु मिलै
सुखु पाए जुग चारि॥ ***अंग - 649***

हम कहते हैं कि पाँच प्यारों के द्वारा हमने अमृतपान कर लिया उन्होंने हमें नाम दे दिया। साधु संगत जी! पाँच प्यारे

हमें गुरुमन्त्र देते हैं, वह मन्त्र जब सिद्ध हो जाता है तो फिर हमारे अन्दर से नाम प्रकट होता है क्योंकि नाम तो पहले से ही विराजमान होता है। वहाँ पर तो प्रत्येक समय आत्मिक संगीत बजता रहता है और वहाँ पर नाम का इतना अधिक आनन्द होता है कि उसे कथन कर पाना ही असम्भव है। जहाँ पर क्रोध का निवास है वहाँ पर कंपकपी है, घबराहट है। ऐसी अवस्था होने से पता लग जाता है कि अब यह अरल-बरल कुछ बोलेगा। इसी प्रकार से नाम बेशकीमती है। जहाँ पर नाम का निवास है, वहाँ पर आनन्द और शान्ति होती ही है।

साई नामु अमोलु
कीम न कोई जाणदो ॥
जिना भाग मथाहि
से नानक हरि रंगु माणदो ॥ *अंग - 81*

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु ॥
देही महि इस का बिस्रामु ॥
सुंन समाधि अनहत तह नाद ॥
कहनु न जाई अचरज बिसमाद ॥ *अंग - 293*

नाम व हउमै का पारस्परिक विरोध है, इसीलिए तुम्हें ऐसी चीज ढूंढ़ लेनी चाहिए जिससे कि हउमै का नाश हो जाए। ऐसा भी सम्भव है कि यह जीव सारे क्रियामान, संचित और प्रारब्ध कर्मों को शरीर से पृथक होकर भोगता तो रहे लेकिन मैं भाव को धारण न करे। अब सवाल यह है कि यह वस्तु प्राप्त कहाँ से हो पाएगी? गुरू जी प्रश्नोत्तर देते हुए फुरमान करते हैं कि भद्रपुरुष! यह सौदा तुम्हें सतगुरू की हाट (दुकान) से प्राप्त हो पाएगा क्योंकि सतगुरू ही सच्चा शाह है और वह नाम रूपी बहुमूल्य वस्तु प्रदान करने वाला है।

गुरु सतिगुरु सचा साहु है
सिख देइ हरि रासे ॥
धनु धंनु वणजारा वणजु है
गुरु साहु साबासे ॥ *अंग - 449*

जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ॥
राम नामु संतन घरि पाइआ॥
तजि अभिमानु लेहु मन मोलि ॥
राम नामु हिरदे महि तोलि ॥
लादि खेप संतह संगि चालु ॥
अवर तिआगि बिखिआ जंजाल ॥
धंनि धंनि कहै सभु कोइ ॥
मुख उजल हरि दरगह सोइ ॥ *अंग - 283*

अब उस वस्तु को खरीदने के लिए उसका मूल्य अदा करना पड़ेगा। उसका मूल्य यह है कि अपनी 'मैं' (मैं भाव) का त्याग करना पड़ेगा। इसके बिना यह सौदा प्राप्त नहीं हो पाएगा। मैं को छोड़कर मरना कबूल करना पड़ता है। जो 'मैं' व 'मेरी' का भाव है या हउमै का भाव है, इसे गुरू-चरणों में भेंट कर देने से तुम नाम धन के बनजारे बन जाओगे। फिर तुम दिन-रात नाम जप-जप कर नाम के भण्डार भर लो। बैखरी वाणी के द्वारा, मध्यमा के द्वारा, पसन्ती के द्वारा, श्वास-श्वास के द्वारा, अनहद की मदद से, परा में, नाम जपते-जपते तुम्हारा भण्डारा भर जाएगा। प्रेमीपुरुष! फिर तुम अकेले मत रहना बल्कि सन्तजनों की संगत में रहना अन्यथा पाँच चोर बहुत बलशाली हैं, वे तुम्हें येन-केन-प्रकारेण लूट ही लेंगे। जब तुम नाम के व्यापारी बन जाओगे तो फिर तो देवगण भी आकर तुम्हारे ऊपर पुष्पवर्षा करेंगे और अन्य सभी भी धन्य-धन्य कहेंगे। राड़ा साहिब वाले महापुरुष बतलाया करते थे कि जब बाबा करम सिंह जी होती मरदान वाले अपनी सांसारिक यात्रा को पूरी करके, सचखण्ड को जाने लगे तो उस समय सारे आकाश में प्रकाश ही प्रकाश हो गया। सारा वातावरण ही सुगन्धमय हो गया तथा अनेकानेक प्रकार के वाद्यों की धुनियाँ सुनाई देने लग पड़ीं और वह दिव्य संगीत इतना आनन्दमयी था जिसे कि कथन कर पाना असम्भव है। उस समय सारे देवगण तथा मुक्तात्माएँ जय-जयकार कर रही थीं कि एक गुरुमुख प्यारा जन्म की बाजी को जीत कर आया है। जब कोई विजेता अपने घर को वापिस लौटाता है तो फिर उसका सम्मान होना स्वाभाविक ही है जबकि जो हार कर जाता है तो उसे तिरस्कार का सामना करते हुए धिक्कारें पड़ती हैं। अतः हम सबको भी जीवन की बाजी को जीत कर ही जाना चाहिए न कि हार कर अपने असली घर की तरफ लौटना चाहिए। गुरू घर में पाँच प्यारे गुरुमन्त्र देते हैं और गुरुमुख प्यारे नाम जपने की युक्ति बतलाते हैं। गुरुमन्त्र को जपने का फल यह होता है कि हउमै का नाश हो जाता है -

वाहिगुरु गुरमंत्र है जपि हउमै खोई।
आपु गवाए आपि है गुण गुणी परोई।
(वार भाई गुरदास जी - 13/2)

दरअस्ल यह जीव वाहिगुरू जी की अंश होते हुए भी, मन के पीछे लगकर हउमै के रोग के कारण दुखी हो रहा है। निःशंक रूप से यह हउमै का रोग भी बहुत बड़ा है, लेकिन इसका इलाज भी इसके अन्दर ही पड़ा है। इलाज यह है कि गुरुमन्त्र की कमाई करे क्योंकि गुरुमन्त्र को जपने से ही हउमै का नाश होना है, अपने मैं भाव को समाप्त करके ही अपने आत्म स्वरूप को ढूँढ़ा जा सकता है। यह भी सत्य है कि केवल कथनी मात्र से तो ज्ञान होने वाला नहीं है

क्योंकि इसके लिए तो बहुत सख्त मेहनत करने की आवश्यकता होती है क्योंकि -

मनमुखु दुख का खेतु है
दुखु बीजे दुखु खाइ ॥
दुख विचि जंमै दुखि मरै
हउमै करत विहाइ ॥ *अंग - 947*

गिआनु न गलीं ढूढीऐ

कथना करड़ा सारु ॥
करमि मिलै ता पाईऐ
होर हिकमति हुकमु खुआरु ॥ *अंग - 465*

जब तक इसके अन्दर हउमै विद्यमान है तब तक यह जीव इस चक्र में फँसा ही रहता है और इसके कर्म इसे बुरी तरह से फँसा कर रखते हैं। जिस समय इसे प्रत्यक्ष ज्ञान हो जाएगा, उस समय इसकी हउमै रूपी अज्ञानता का अन्धकार दूर हो पाएगा। जब अज्ञानता का अन्धकार दूर हो गया तो फिर इसे प्रत्यक्ष ज्ञान हो जाता है कि अन्धकार के कारण जो मुझे साँप प्रतीत हो रही थी वह तो वास्तव में एक साधारण रस्सी ही थी।

अतः इस हउमै का उपचार यही है कि पाँच प्यारों से गुरुमन्त्र प्राप्त करके इतना नाम जपो कि हउमै का भयानक रोग समूल नष्ट हो जाए -

हउमै दीरघ रोगु है
दारु भी इसु माहि ॥
किरपा करे जे आपणी
ता गुर का सबदु कमाहि ॥
नानकु कहै सुणहु जनहु
इतु संजमि दुख जाहि ॥ *अंग - 466*

हउमै ने हमें वाहिगुरू के साथ से तोड़ दिया है, जब तक हम अपने मूल रूप से नहीं मिलते हैं, तब तक हमारा आवागमन का चक्र समाप्त नहीं हो पाएगा जो विनतियाँ की गई हैं, उन्हें अपने हृदय में बसाओ ताकि सत्संग करने का पूरा-पूरा लाभ प्राप्त हो सके। इस समस्या को हल करने का इरादा बनाओ क्योंकि जो इरादा कर लिया जाता है वह फिर पूरा हो ही जाता है या फिर अगले जन्म में पूरे गुरू का मिलाप हो जाया करता है। अतः -

आगाहा कू त्राधि पिछा फेरि न मुहडड़ा ॥
अंग - 1096

इस मार्ग पर यात्रा करते हुए फिर अपने कदम आगे की तरफ बढ़ाते ही जाना फिर पीछे मुड़कर न देखना। इस प्रकार शनैः शनैः मार्ग तय हो जाएगा। यदि सौ जन्मों में भी पूरा हो गया तो भी बहुत बड़ी बात है क्योंकि इसमें हिसाब किताब की बात नहीं है। जब भी उसकी कृपा हो जाए उसी समय परम पद की प्राप्ति हो जाती है। अतः हमें तो बस वाहिगुरू की कृपा के याचना करते रहना चाहिए अरदास करनी चाहिए कि हे वाहिगुरू जी! मैं आपसे बिछुड़ कर दुखी हो रहा हूँ, मेरे अन्दर से अवगुणों को दूर कर दो, मैं व मेरी को दूर कर दो ताकि तुम, मैं, बन जाओ और मैं तुम बन जाऊँ। जब 'मैं' समाप्त हो जाएगी तो उस समय फिर वास्तविक चीज प्रत्यक्ष होकर ज्यों की त्यों प्रकट हो जाएगी और फिर तुम्हें अपने असली स्वरूप का पता चल जाएगा। इस बात को तो तुम पूर्ण रूप से ही भूले हुए थे कि मैं कौन हूँ और कहाँ से आया हूँ। यथा -

सुनहु रे तू कउनु कहा ते आइओ ॥
एती न जानउ केतीक मुदति चलते
खबरि न पाइओ॥ रहाउ ॥
सहन सील पवन अरु पाणी
बसुधा खिमा निभराते ॥
पंच तत मिलि भइओ संजोगा
इन महि कवन दुराते ॥
जिनि रचि रचिआ पुरखि बिधातै
नाले हउमै पाई ॥
जनम मरणु उस ही कउ है रे
ओहा आवै जाई ॥ *अंग - 999*

फिर तुम्हें पता चल जाएगा कि हउमै के कारण ही जन्म मरण का चक्र है और इसी के कारण पुत्र, पुत्रियाँ, जमीनें व जायदादों का निर्माण होता है। हउमै के कारण ही जीव माया के बन्धनों में फँसता है। इसीलिए गुरुमुखजन पहले पाँच प्यारों से विधिपूर्वक गुरुमन्त्र प्राप्त करते हैं यानि कि अमृतपान करते हैं, उसकी मर्यादाओं व नियमों का पालन करते हैं, सत्संग करते हुए नाम की कमाई करते हैं। नाम जपने वाले गुरुमुखजनों की संगत करते हैं। नाम जपने वाले गुरुमुखजनों की संगत करते हैं तथा निष्काम सेवा करके हउमै के सारे बन्धनों से छुटकारा पाकर जन्म-मरण के चक्र को समाप्त करके हमेशा के लिए वाहिगुरू जी में अभेद हो जाते हैं।

6. मुरदा होइ मुरीद.....।

इस संसार में आने का हमारा परम मनोरथ है कि समर्थ गुरू को धारण करके बन्दगी की जाए तथा अपने परम श्रोत वाहिगुरू जी में अभेदता प्राप्त की जाए। इसके अतिरिक्त जो हमारे अन्य मनोरथ हैं उन्हें तो गुरू महाराज जी ने गिना ही

नहीं है क्योंकि उनका कोई मूल्य ही नहीं पड़ता है इसलिए वैसे ही फिजूल में खपते रहने का कोई लाभ नहीं हो पाया करता है। यहाँ तो 'हुक्म' का ही सारा खेल चल रहा है, जिसने हुक्म को पहचान लिया उसने वाहिगुरू जी को भी जान लिया।

नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ॥

अंग - 1

सभ महि सचा एको सोई
तिस का कीआ सभु कछु होई ॥
हुकमु पछानै सु एको जानै बंदा कहीऐ सोई ॥

अंग - 1350

हुक्म के बाँधे हुए हम चल रहे हैं। जो कर्म हमने किए हैं, वे भी शक्तिशाली हैं क्योंकि उन्हें हमने भोगना है। कर्मों को भोगने के लिए हमें उसी प्रकार का वातावरण व माहौल मिलता रहेगा। उसमें हमारी प्रारब्ध भी होती है, जो कि हमने खाना, पीना व पहनना होता है, इसके अतिरिक्त रहने आदि की व्यवस्था होती है। जीव जब अपनी जीवन यात्रा पर निकलता है तो उसके माथे पर लिखा होता है कि अमुक तारीख को यह अमुक समय संसार में जन्म लेगा। माता के गर्भ में इसका रक्षा प्रभु जी स्वयं ही करते हैं। कई जीवों का समय ऐसा भी लिखा होता है कि वे जन्म लेते ही मर जाते हैं। उन्होंने कुछ ऐसे बुरे कर्म किए होते हैं उनकी बारी तो आई थी लेकिन वह कट गई। जो हम सांसारिक जीव हैं, तो हमारे माथे पर भी दुख-सुख के लेख, शरीर के परित्याग का कारण, समय व जगह के बारे में लिखा होता है -

जैसी कलम वुड़ी है मसतकि तैसी जीअड़े पासि॥

अंग - 74

दूसरा यह है कि इसे रिश्तेदार कौन से मिलने हैं, दुख देने वाले मिलेंगे या सुख देने वाले मिलेंगे अथवा मदद करने वाले मिलेंगे। मित्र जो है वे सच्चे मिलेंगे या फिर छल-कपट करने वाले मिलेंगे। यह सब कुछ जीव के माथे पर लिख दिया जाता है। इसीलिए महाराज जी कहते हैं, प्रेमीजनो! किसी को दोष मत दो बल्कि अपने बुरे कर्मों को ही दोष दो -

ददै दोसु न देउ किसै
दोसु करंमा आपणिआ ॥
जो मै कीआ सो मै पाइआ
दोसु न दीजै अवर जना॥

अंग - 433

तीसरा होता है समर्थ गुरू का मिल जाना। यदि पुण्य कर्म जमा हों तभी समर्थ गुरू की प्राप्ति हो पाया करती है क्योंकि अपने आप से कुछ भी नहीं हो पाया करता है, यह सब कुछ कर्मों के प्रबन्ध की आधीन ही चला करता है। अब यहाँ पर यह भी प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या जीव को भी कोई स्वतन्त्रता है अथवा नहीं? गुरू जी उपदेश करते हैं कि जीव को कर्म करने की स्वतन्त्रता है -

ऐसा कंमु मूले न कीचै
जितु अंति पछोताईऐ ॥

अंग - 918

ऐसी कला न खेडीऐ
जितु दरगह गइआ हारीऐ ॥

अंग - 469

कर्म करने के लिए परमात्मा ने हमें बुद्धि प्रदान की है। यदि हम अच्छे कर्म करेंगे तो हमें सुख मिलेगा और यदि हम बुरे कर्म करेंगे तो फिर हमें दुख की प्राप्ति होनी आवश्यम्भावी है। कर्म किस प्रकार के करने हैं, इसकी हमें स्वतन्त्रता है। अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के कर्म संचित होकर, हुक्मानुसार प्रारब्ध कर्म बन जाया करते हैं। पिछले जन्म का तप, साधू का मिलाप, साधुओं की सेवा तथा संगत की सेवा करने के कारण जब अगले जन्म में आता है यानि कि उसे परम पद की प्राप्ति अभी नहीं हो पाती है तो उसे योग भ्रष्ट कहते हैं। योगभ्रष्ट जिज्ञासु को यदि बचपन में ही कोई महात्मा मिल जाए तो उसके पाँच-दस जन्म तो जद्दोजहिद करते हुए ही व्यतीत हो जाते हैं। उसके बाद में ही उसके माथे पर लिखा जाता है कि इसे अब पूरा गुरू मिलेगा। यथा -

जिन मसतकि धुरि हरि लिखिआ
तिना सतिगुरु मिलिआ राम राजे ॥

अंग - 450

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम ॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥

अंग - 12

जो असली कार्य है, वह तो वाहिगुरू जी को मिलने का ही है, इसके अतिरिक्त अन्य सारे कार्य निरर्थक ही है, क्योंकि मनुष्य शरीर बड़ी मुश्किल से तो प्राप्त होता है फिर इसका सही उपयोग भी न किया जाए तो फिर तो यह निरर्थक ही हुआ। कोई विरला-विरला पुरुष है जो इस बात को अपने मन में बसाता है जबकि अन्य लोगों को तो यह बात समझ में ही नहीं आ पाती है। उन्हें यह बात समझ में इसलिए नहीं आ पाती है क्योंकि उनके अभी तक पुण्य कर्म बने ही नहीं हैं।

'चलता'

हरि कीरति साधसंगति है सिरि करमन कै करमा।।

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

पाठु पड़िओ अरु बेदु बीचारिओ निवलि भुअंगम साधे॥
पंच जना सिउ संगु न छुटकिओ अधिक अहंबुधि बाधे॥
पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई मै कीओ करम अनेका॥
हारि परिओ सुआमी कै दुआरै दीजै बुधि बिबेका ॥ रहाउ ॥
मोनि भइओ करपाती रहिओ नगन फिरिओ बन माही॥
तट तीरथ सभ धरती भ्रमिओ दुबिधा छुटकै नाही ॥
मन कामना तीरथ जाइ बसिओ सिरि करवत धराए ॥
मन की मैलु न उतरै इह बिधि जे लख जतन कराए॥
कनिक कामिनी हैवर गैवर बहु बिधि दानु दातारा ॥
अंन बसत्र भूमि बहु अरपे नह मिलीऐ हरि दुआरा ॥
पूजा अरचा बंदन डंडउत खटु करमा रतु रहता ॥
हउ हउ करत बंधन महि परिआ नह मिलीऐ इह जुगता ॥ 5 ॥
जोग सिध आसण चउरासीह ए भी करि करि रहिआ॥
वडी आरजा फिरि फिरि जनमै हरि सिउ संगु न गहिआ ॥ 6 ॥
राज लीला राजन की रचना करिआ हुकमु अफारा ॥
सेज सोहनी चंदनु चोआ नरक घोर का दुआरा ॥
हरि कीरति साधसंगति है सिरि करमन कै करमा ॥
कहु नानक तिसु भइओ परापति
जिसु पुरब लिखे का लहना ॥ 8 ॥ *अंग – 641*

कबीर संगति करीऐ साध की अंति करै निरबाहु ॥
साकत संगु न कीजीऐ जा ते होइ बिनाहु ॥
अंग – 1369

परम सम्माननीया गुरु प्यारी साधु संगत जी! आओ! ख्यालों को बाहर जाने से रोकने का यत्न करें तथा चित्त वृत्तियों को एकाग्र करते हुए, जिह्वा की पवित्रता के लिए सारे ही उच्चारण करो जी 'सतिनाम श्री वाहिगुरू'। भाग्यशाली प्रेमीजन हैं जो कि सुदूरवर्ती व आस पास के स्थानों से चलकर संगत में आए हैं। संगत में आकर विचार क्या की जाती है? केवल और केवल नाम के साथ जुड़ने की विचार ही यहाँ होती है। नाम के साथ जुड़ने के लिए प्रेरित करने के लिए कई प्रकार की साखियाँ व प्रमाण दिए जाते हैं। क्योंकि -

सुणि साखी मन जपि पिआर ॥
अजामलु उधरिआ कहि एक बार ॥ *अंग – 1192*

युक्ति के द्वारा मुक्ति हो जाया करती है, इसलिए कहा जाता है कि जब तक भाग्य उत्तम न हों तब तक सत्संग प्राप्त नहीं हो पाया करती है।

वडभागी साधसंगु परापति तिन भेटत दुरमति खोई॥
तिन की धूरि नानकु दासु बाछै
जिन हरि नामु रिदै परोई ॥ *अंग – 618*

सत्संग एक ऐसा विलक्षण मण्डल है कि जहाँ पर प्यार वाले सारे इक्ट्ठे होकर रूहानी खुराक को प्राप्त करते हैं। प्यार वाले ही इस स्थान पर पहुँचे हैं -

जिनि प्रेम कीओ तिन ही प्रभ पाइओ।

कितना सुहावना समय हम सबको प्राप्त हुआ है -

नाम की महिमा संत रिद वसै ॥
संत प्रतापि दुरतु सभु नसै ॥
संत का संगु वडभागी पाईऐ ॥
संत की सेवा नामु धिआईऐ ॥
नाम तुलि कछु अवरु न होइ ॥
नानक गुरमुखि नामु पावै जनु कोइ ॥ *अंग – 256*

सत्संग के अन्दर नाम स्मरण की युक्ति प्राप्त हो जाया करती है। कल्युग का समय है। विशिष्ठ जी तथा विश्वामित्र जी का परस्पर इस बात को लेकर संवाद हो गया कि तपस्या का फल अधिक है या फिर सत्संग का फल अधिक है।

विश्वामित्र जी बहुत तपस्वी थे। वे कहने लगे कि तप का फल अधिक है। विशिष्ठ जी बोले नहीं, सत्संग का फल अधिक है, तुमने अभी सुना है कि शेषनाग जी नित्य प्रतिदिन दो हजार नए नाम उच्चारण करता है। अब इस बात का निर्णय प्राप्त करने के लिए वे शेषनाग जी के पास पहुँच जाते हैं। पहले शिव जी, ब्रह्मा जी और विष्णु जी के पास गए -

ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु॥
अंग – 7

कहने लगे चलो अब शेषनाग जी को जाकर पूछते हैं। अब वे उनके पास उपस्थित हो जाते हैं। शेषनाग जी बोले, देखो मैं तो नित्य प्रतिदिन परमात्मा के नए नाम उच्चारण करके उसका सिमरन करता हूँ इसलिए मेरे पास समय ही नहीं है। धरती उसके सहारे खड़ी है।

इसलिए पहले मुझे इसके बदले में कुछ फल दो तभी मैं विचार के लिए समय निकाल सकता हूँ। विश्वामित्र जी ने हजारों साल की तपस्या का फल उसे दे दिया लेकिन उस फल के द्वारा धरती डोलने से रुकती नहीं है। फिर विशिष्ट

जी ने एक घड़ी सत्संग का, यानि कि साढे चौबीस मिनट का, फल दे दिया जिससे कि धरती डोलने से रुक गई। अब शेषनाग जी ने कहा, ऋषिजनो! मेरे ख्याल से अब तो आप लोगों के सवाल का जवाब स्वतः ही मिल गया होगा कि कहाँ तो एक तरफ हजारों साल का तप और कहाँ एक घड़ी का सत्संग। अतः सत्संग का महात्म्य बेशुमार है -

कबीर एक घड़ी आधी घरी आधी हूं ते आध ॥
भगतन सेती गोसटे जो कीने सो लाभ ॥अंग - 1377

इसका लाभ ही है। जब सत्संगीजन इकट्ठे होकर सत्संग करते हैं तो कल्युग में यह बहुत बड़ा पुण्य है -

कलि महि एहो पुंनु गुण गोविंद गाहि ॥ अंग - 962

पाठु पड़िओ अरु बेदु बीचारिओ निवलि भुअंगम साधे॥
पंच जना सिउ संगु न छुटकिओ अधिक अहंबुधि बाधे॥

बिना ध्यान देकर जो पाठ करते रहते हैं, टीके पढ़ते रहते हैं, व्याकरण पढ़ते रहते हैं और बहुत लम्बा समय इसी में लगा देते हैं, लेकिन जो -

वेदा महि नामु उतमु सो सुणहि नाही
फिरहि जिउ बेतालिआ ॥ अंग - 919

दरअस्ल जब हम गुरवाणी पढ़ते हैं तो वह हमें नाम जपने के लिए कहती है -

इह बाणी जो जीअहु जाणै
तिसु अंतरि रवै हरि नामा ॥ अंग - 797

गुरवाणी हमें निर्देश देती है, संकेत देती है कि यह कार्य करो और यह न करो जैसे कि रास्तों पर मील पत्थर लगे हुए होते हैं, उससे पता चल जाता है कि हमारा गन्तव्य स्थान कितने कि. मी. रह गया है। लेकिन यदि हम उस मील पत्थर पर ही बैठ जाएँ और आगे ही न बढ़ें तो फिर सफर कैसे तय होगा? अतः गुरवाणी तो हमारी मार्ग दर्शक है वह हमें दिशा दिखा रही है -

धुर की बाणी आई ॥
तिनि सगली चिंत मिटाई ॥ अंग - 628

गुरवाणी, नाम के बारे में बताती है कि प्रेमीजनो! नाम जपने की तरफ चलो। यदि नहीं चलते तो फिर कुछ भी करते रहो उससे कुछ भी होने वाला नहीं -

पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई
मै कीओ करम अनेका ॥
हारि परिओ सुआमी कै दुआरै दीजै बुधि बिबेका ॥
अंग - 641

विवेक बुद्धि की विचार के द्वारा बात समझ में आती है कि क्या करना चाहिए? और हम करने के लिए क्या आए हैं? हमारा मनुष्य जन्म का प्रयोजन क्या है? वास्तव में मनुष्य जन्म का जो प्रयोजन है वह है नाम सिमरन और सेवा करनी-

गुर सेवा ते भगति कमाई ॥
तब इह मानस देही पाई ॥ अंग - 1159

यह मनुष्य जन्म हमें इसलिए नहीं मिला कि हम अपने परिवारों में ही मस्त रहें या कारोबारों में ही व्यस्त रहें क्योंकि असली चीज जो है वह यह है कि -

अवरि काज तेरै कितै न काम ॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥ अंग - 12

नाम के साथ जुड़ना ही हमारा असली काम है और यह मनुष्य जन्म हमें इसीलिए प्राप्त हुआ है। सेवा व सिमरन के लिए यह जन्म हमें प्राप्त हुआ है। लेकिन संसार पर आकर यह इन्सान करने क्या लग पड़ा है -

रैणि गवाई सोइ कै दिवसु गवाइआ खाइ ॥
हीरे जैसा जनमु है कउडी बदले जाइ ॥ अंग - 156

यह समय तो बीतता जा रहा है। सारी रात सोकर व विषय-विकारों में बीत रही है तथा सारा दिन खा-पीकर बीत रहा है। हमारा कितना समय इसी प्रकार से बीतता जा रहा है -

पहिलै पिआरि लगा थण दुधि ॥
दूजै माइ बाप की सुधि ॥
तीजै भया भाभी बेब ॥
चउथै पिआरि उपंनी खेड ॥
पंजवै खाण पीअण की धातु ॥
छिवै कामु न पुछै जाति ॥
सतवै संजि कीआ घर वासु ॥
अठवै क्रोधु होआ तन नासु ॥
नावै धउले उभे साह ॥
दसवै दधा होआ सुआह ॥
गए सिगीत पुकारी धाह ॥
उडिआ हंसु दसाए राह ॥
आइआ गइआ मुइआ नाउ ॥
पिछै पतलि सदिहु काव ॥
नानक मनमुखि अंधु पिआरु ॥
बाझु गुरु डुबा संसारु ॥ अंग - 135

संसार की हालत ऐसी बन चुकी है कि हम सारा दिन दौड़ भाग करके मजदूरी करते रहते हैं। एक दूसरे से आगे निकल जाने की दौड़ लगी हुई है उसमें हम व्यस्त रहते हैं लेकिन जब नाम जपने का समय आता है तो -

हरि सिमरन की वेला बजर सिरि परै ॥ अंग - 1143

फिर इसे कितना बोझ महसूस होता है अर्थात इसे बहुत कठिन प्रतीत होता है जबकि -

कलजुग नानक नामु सुखाला। भाई गुरदास जी

महापुरुषों ने कृपा की कि कल्युगी जीवों के भले के लिए सत्संग की परम्परा चलाई वैसे तो आदिकाल से ही, सत्युग से ही सत्संग का विधान चला आ रहा है।

तारा रानी, राजा हरीचन्द की पत्नी -

राती जाइ सुणहि गुरबाणी।

यानि कि तारा रानी गुरवाणी सुनने या सत्संग करने जाया करती थी क्योंकि यदि आप सत्संग करते हो तो सारे कार्य स्वतः ही होंगे -

थिरु घरि बैसहु हरि जन पिआरे ॥
सतिगुरि तुमरे काज सवारे ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
दुसट दूत परमेसरि मारे ॥
जन की पैज रखी करतारे ॥ अंग - 201

बस उस निजघर में स्थित होने की जरूरत है। इस शरीर के अन्दर जहाँ पर नाम है यदि वहाँ पर स्थिति हो जाए तो वह शरीर भी अति सुन्दर पूज्नीय हो जाता है। इस प्रकार का व्यक्ति जहाँ पर भी चरण रख दे -

जिथै बैसनि साध जन सो थानु सुहंदा ॥
ओइ सेवनि संम्रिथु आपणा बिनसै सभु मंदा ॥
अंग - 319

सत्संग में हरेक व्यक्ति नहीं आ सकता है क्योंकि जब किसी व्यक्ति का कोई पूर्वजन्म का संचित कर्म फल देने के लिए तैयार हो जाता है तभी वह सत्संग में पहुँच पाया करता है। यदि आने के बाद भी कर्म फलदायक न हों तो फिर -

पूरब करम अंकुर जब प्रगटे
भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी ॥
मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक
जनम जनम की सोई जागी ॥ अंग - 204

फिर उसे रसिक पुरुष की संगत मिल जाती है फिर किसी शुष्क ज्ञानी की नहीं अपितु रसिक ज्ञानी की संगत प्राप्त हो जाती है। जब भक्ति या प्रेम सहित ज्ञानवान की संगत मिल जाती है और वे सत्संग में विचार करते हैं तभी मनुष्य को मंजिल-ए-मकसूद प्राप्त हो पाती है।

इसके अतिरिक्त जो अन्य लोग तीर्थ व व्रतादि करते हैं, इससे उनके अहंकार में ही वृद्धि होती है। यथा -

तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु ॥
नानक निहफलु जात तिह जिउ कुंचर इसनानु ॥
अंग - 1428

पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई
मै कीओ करम अनेका ॥
हारि परिओ सुआमी कै दुआरै दीजै बुधि बिबेका ॥ रहाउ ॥
मोनि भइओ करपाती रहिओ नगन फिरिओ बन माही॥ तट तीरथ सभ धरती भ्रमिओ दुबिधा छुटकै नाही॥ अंग - 641

कई लोगों ने मौन व्रत ही धारण किया हुआ है, कितने-कितने साल उन्हें मौन धारण करके बैठे हुए ही हो गए हैं लेकिन गुरू जी उन्हें स्वीकार नहीं करते हैं -

बोलै नाही होइ बैठा मोनी ॥
अंतरि कलप भवाईऐ जोनी ॥ अंग - 1348

उनके अन्दर से तो विचारों का युद्ध जारी रहता है जबकि बाहर से वह मौन होकर बैठा रहता है लेकिन -

सोचै सोचि न होवई जे सोची लखवार ॥
चुपै चुप न होवई जे लाइ रहा लिवतार ॥ अंग - 1

चाहे कितनी ही देर बैठे रहो लेकिन अन्दर की हलचल तो समाप्त नहीं होती है। वास्तव में तो इन्द्रियों का मौन हुआ करता है। इन्हें बुरी तरफ जाने से रोकना है -

मोनि भइओ करपाती रहिओ
नगन फिरिओ बन माही॥ अंग - 641

'करपाती' का तात्पर्य है कि वे बर्तनों में नहीं बल्कि हाथों पर ही भोजन लेकर ग्रहण कर लेते हैं जैसे कि जैन मुनि 24 घंटों में केवल एक बार ही भोजन ग्रहण करते हैं वह भी हाथों पर ही।

जैन मारग संजम अति साधन ॥ अंग - 265

बहुत कठिन साधन करते हैं, दिगम्बर रहते हैं, वस्त्र ही नहीं पहनते हैं, यह भी उनका कितना बड़ा हठ होता है। कई लोगों ने यह प्रतिज्ञा की हुई होती है कि कहीं पर भी एक रात से ज्यादा नहीं रुकना है, लेकिन गुरु जी ने इन सब कार्यों को कोई विशेष महत्व नहीं दिया है -

मन कामना तीरथ जाइ बसिओ सिरि करवत धराए ॥
मन की मैलु न उतरै इह बिधि जे लख जतन कराए॥
अंग - 642

यदि अन्दर से मैल दूर नहीं हो पाई तो फिर तीर्थों के ऊपर चाहे जितना मर्जी नहाते घूमो, उसका इतना अधिक फल नहीं मिलता है। मिलता तो जरूर है, यदि हम विधिपूर्वक करते हैं लेकिन फिर वह यह कहता रहता है कि मैं इतने तीर्थों पर गया, इतनी जगह स्नान किए यानि कि अहंकार को धारण कर लेता है लेकिन इससे हुआ क्या -

पाप करहि पंचाँ के बसि रे ॥
तीरथि नाइ कहहि सभि उतरे ॥ अंग - 1348

ये पाँचों इसे भूला देते हैं। तीर्थों पर जाने से भी फल तभी मिल पाता है जबकि हम विधिपूर्वक स्नान करते हैं। यदि वहाँ पर सत्संग होता है जैसे कि कुम्भ पर लोग जाते हैं, वहाँ पर सन्तजन सत्संग करते हैं, बहिरंग व अन्तरंग साधन बताते हैं फिर तो ठीक है क्योंकि -

तीरथि नावण जाउ तीरथु नामु है ॥ अंग - 687

असली तीर्थ तो नाम है लेकिन हुआ क्या -

नावण चले तीरथी मनि खोटै तनि चोर ॥
इकु भाउ लथी नातिआ दुइ भा चड़ीअसु होर ॥ बाहरि

धोती तूमड़ी अंदरि विसु निकोर ॥
साध भले अणनातिआ चोर सि चोरा चोर ॥
अंग - 789

मन खुटहर तेरा नही बिसासु तू महा उदमादा ॥
अंग - 815

मन तो वश में आता ही नहीं -

मनु बसि आवै नानका जे पूरन किरपा होइ ॥
अंग - 298

यदि साधू की संगत मिले तो वे हमें ऐसी शिक्षा देंगे, ऐसी दीक्षा देंगे कि तुम अपने मन को अपने नियन्त्रण में करो-

ममा मन सिउ काजु है मन साधे सिधि होइ ॥
मन ही मन सिउ कहै कबीरा
मन सा मिलिआ न कोइ ॥ अंग - 342

यदि अन्दर से ही परिवर्तन नहीं आया तो फिर तो बात नहीं बन पाया करती है। उदाहरण के द्वारा महापुरुष समझाया करते हैं। कबीर साहिब को भी पण्डितों ने कहा कि तीर्थ स्नान के लिए चलो। वे कहने लगे कि एक बार तो मैं जाने भी लगा लेकिन -

कबीर हज काबे हउ जाइ था आगै मिलिआ खुदाइ॥
साँई मुझ सिउ लरि परिआ तुझै किनि फुरमाई गाइ॥
अंग - 1375

तुम्हें किसने कहा कि मैं यहाँ पर रहता हूँ? मैं रहता तो तुम्हारे अन्दर ही हूँ और तुम किस तरफ चल पड़े हो? अत: वह कहने लगे कि चलो यदि तुम कहते ही हो तो हमारी यह कड़वी लौकी की बनी हुई तुम्बी है, इसे ले जाओ और उसे वह ले गए। वे सारे तीर्थ पर स्नान करवा कर ले आए -

लउकी अठसठि तीरथ नाई ॥
कउरापनु तउ न जाई ॥ 2 ॥
कहि कबीर बीचारी ॥
भव सागरु तारि मुरारी ॥ अंग - 656

स्वभाव तो फिर भी नहीं बदला। कड़वी तुम्बी को तीर्थों पर स्नान करवा कर ले आए। जब वे उसके प्रसाद का वितरण करने लगे तो सभी लोग थू-थू करने लगे कि यह तो बेतहाशा कड़वी है भावार्थ उसका स्वभाव नहीं बदला -

मन कामना तीरथ जाइ बसिओ सिरि करवत धराए॥
मन की मैलु न उतरै इह बिधि जे लख जतन कराए॥

बेशक तुम कितने भी यत्न कर लो लेकिन जो हमारे मन के अन्दर मैल लगी हुई है -

जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी
काला होआ सिआहु ॥
खंनली धोती उजली न होवई जे सउ धोवणि पाहु ॥
अंग - 651

अब तीर्थ के तट पर भी बैठ गया लेकिन वहाँ पर जा कर करता क्या है क्योंकि मन में तो विकार हैं, मन तो विषय-विकारों से भरा पड़ा है, तो फिर नाम में निवास कैसे हो जाएगा? इसके अतिरिक्त वह अन्य प्रकार के कर्म भी करता है -

कनिक कामिनी हैवर गैवर
बहु बिधि दानु दातारा ॥ अंग - 642

पहले समयों में स्त्री को भी श्रृंगार लगाकर दान कर देते थे लेकिन ये सब कर्म भी फलदायक नहीं हैं -

अंन बसत्र भूमि बहु अरपे नह मिलीऐ हरि दुआरा ॥
अंग - 642

ये कर्म फलदायक क्यों नहीं होते? इसलिए क्योंकि यह कल्युग का समय है। इस समय में ये सारे दान पुण्य अधिक फलदायक नहीं हो पाते हैं।

ये तो महापुरुषों के पास युक्तियाँ होती हैं। वे बतलाते हैं कि प्रेमीपुरुष! यदि तुमने दान भी करना है तो ऐसे करो कि दाएँ हाथ से करो और बाएँ हाथ को पता न लगे। जिस प्रकार से किसी वृक्ष की जड़ है और हमने उस वृक्ष को एक जगह से उखाड़ कर उसे दूसरी जगह पर लगाना है तो उसके लिए यह जरूरी है कि उसकी जड़ को हवा न लगे। यदि हवा लग गई तो फिर वृक्ष सूख जाएगा। इसलिए वह फलीभूत नहीं हो पाता है -

दे दे मंगहि सहसा गूणा सोभ करे संसारु ॥
अंग - 466

हम लोग तो थोड़ा सा दान-पुण्य करके उसके बदले में हजारों गुणा माँगते हैं और हमारी शोभा भी हो।

एक बार एक माता ने किसी महात्मा को भोजन ग्रहण करवाया और उसके बाद वह अपने मकान की छत पर चढ़ गई। महापुरुष कहने लगे, माता! क्या देख रही हो? वह कहने लगी कि मैं देख रही हूँ कि मुझे बिबान लेने के लिए आएँगे?

महापुरुष कहने लगे, माता!

अहिरण दी चोरी करे, सूई कर दी दान।
कोठे चड़ के देखदी कि्थों आण बिबान।

फरीदा लोड़ै दाख बिजउरीआँ किकरि बीजै जटु ॥
हंढै उंन कताइदा पैधा लोड़ै पटु ॥ अंग - 1379

इसलिए -

जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ॥ अंग - 134

अब आगे और भी बताया है -

पूजा अरचा बंदन डंडउत खटु करमा रतु रहता ॥
अंग - 642

छ: प्रकार के षट कर्म होते हैं जिस प्रकार से पण्डित करते हैं विद्या पढ़नी व पढ़ानी, यज्ञ करने व करवाने, दान

देना तथा दान लेना। ये षट कर्म होते हैं लेकिन ये सारे कर्म करने के बाद भी यदि नाम में स्थिति नहीं हो पाती है तो ये सब निरर्थक कार्य बन जाते हैं। दूसरी तरफ यदि नाम के साथ जुड़ गए तो फिर ये सारे कर्म फलीभूत हो जाते हैं, अन्यथा प्यारे -

हउ हउ करत बंधन महि परिआ
नह मिलीऐ इह जुगता ॥ ***अंग - 642***

हउ हउ मै मै विचहु खोवै ॥
दूजा मेटै एको होवै ॥ ***अंग - 943***

बात तो नुक्ते की है सत्संग के अन्दर साधू बतलाते हैं कि तुम 'मैं' को 'तू' में बदल दो 'मैं', 'तू' बन जाओ -

कबीर मेरा मुझ महि किछु नही जो किछु है सो तेरा॥
तुझ कउ सउपते किआ लागै मेरा ॥ ***अंग - 1375***

सब कुछ उसी का समझ कर करो। एक ड्यूटी समझ कर करो। जिम्मेवारी से दौड़ो नहीं। तुम अपनी जिम्मेवारियों को निभाते हुए युक्ति के द्वारा मुक्ति को प्राप्त कर सकते हो। इसलिए तुम अन्तरंग साधन करो -

संतसंगि अंतरि प्रभु डीठा ॥
नामु प्रभू का लागा मीठा ॥ ***अंग - 293***

क्योंकि हम लोग हउमै के अधीन होकर कार्य करते हैं इसीलिए हमारे कर्म, हमें वांछित फल नहीं देते हैं -

हउ हउ करत बंधन महि परिआ
नह मिलीऐ इह जुगता ॥ 5 ॥
जोग सिध आसण चउरासीह ओ भी करि करि रहिआ॥
वडी आरजा फिरि फिरि जनमै
हरि सिउ संगु न गहिआ ॥ ***अंग - 642***

योगी लोग प्राणायाम के माध्यम से अपनी उम्रों को बहुत लम्बा कर लेते हैं। जब काल आता है तो इन्हें पता चल जाता है, फलस्वरूप ये दसवें द्वार में अपने श्वास चढ़ा लेते हैं। यथा 'जम आवत है पर पावत नाही।' वे अपने श्वासों को रोककर उस समय को गुजार देते हैं और इस प्रकार से अपनी उम्रों को बढ़ा लेते हैं। आज भी हिमालय पर्वत पर चले जाओ तो वहाँ पर इस प्रकार के योगी मिल जाएँगे। डा. स्वामी राम जी जो कि बड़े महापुरुषों के स्नेही थी और जिनके लेख आत्म मार्ग पत्रिका में प्रकाशित होते हैं, उन्होंने बहुत बड़ी खोज की और अपने निजी अनुभवों को कलमबन्द करते हुए लिखा कि बहुत ही बड़ी-बड़ी उम्रों वाले साधू गुफाओं में बैठे हैं। अब लम्बी आयु होने से हुआ क्या? परमात्मा के साथ मिलने की प्रतीक्षा तो और भी लम्बी हो गई लेकिन आवागमन का चक्र समाप्त नहीं हो पाया।

राज लीला राजन की रचना करिआ हुकमु अफारा ॥
सेज सोहनी चंदनु चोआ नरक घोर का दुआरा ॥
अंग - 642

सुंदर सेज अनेक सुख रस भोगण पूरे ॥
ग्रिह सोइन चंदन सुगंध लाइ मोती हीरे ॥
मन इछे सुख माणदा किछु नाहि विसूरे ॥
सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे ॥
बिनु हरि नाम न साँति होइ कितु बिधि मनु धीरे ॥
अंग - 707

व्यक्ति चाहे कुछ भी करता रहे यदि नाम में स्थित नहीं हुआ तो उसे शान्ति नहीं मिल सकेगी। यदि हम गुरु जी से पूछें कि हमारा मन शान्त कैसे हो सकता है तो वे बताते हैं कि 'नाम' के बिना मन शान्त नहीं हो सकता है। गुरू जी ने तो सत्संग भी उसी को कहा है जहाँ पर कि नाम की विचार होती है और नाम में स्थित हो जाना ही बड़ी प्राप्ति है। यदि नाम में स्थिति नहीं हो सकी तो फिर गुरू जी कहते हैं -

जती सदावहि जुगति न जाणहि
छडि बहहि घर बारु॥
सभु को पूरा आपे होवै घटि न कोई आखै ॥
पति परवाणा पिछै पाईऐ ता नानक तोलिआ जापै ॥
मः 1 ॥
वदी सु वजगि नानका सचा वेखै सोइ ॥
सभनी छाला मारीआ करता करे सु होइ ॥
अगै जाति न जोरु है अगै जीउ नवे ॥
जिन की लेखै पति पवै चंगे सेई केइ ॥ ***अंग - 469***

इसीलिए वास्तविकता तो यही है कि नाम की प्राप्ति ही असली प्राप्ति है, अन्यथा आवागमन का चक्र समाप्त हो पाना नामुमकिन है और हम खुशी-गमी व सुख-दुख के चक्रव्यूह से बाहर नहीं निकल पाएँगे। यही मूलभूत कारण है कि हम लोग अपने प्रियतम के देश यानि कि सच्चिदानन्द के देश में पहुँच नहीं सके हैं और इसी तथाकथित चक्रव्यूह में फँस कर रह गए हैं।

जो ब्रहमंडे सोई पिंडे जो खोजै सो पावै ॥
अंग - 695

जो नाम या परमात्मा को अपने अन्दर से ही खोजने की युक्ति प्राप्त कर ले उसी की वास्तविक प्राप्ति है और यह प्राप्ति सत्संग में से ही प्राप्त होती है -

हरि कीरति साधसंगति है सिरि करमन कै करमा ॥
कहु नानक तिसु भइओ परापति
जिसु पुरब लिखे का लहना ॥ ***अंग - 642***

यह भी सत्य है कि जब तक कोई पूर्वजन्म का संचित कर्म फल देने के लिए तैयार न हो तब तक सत्संग में पहुँच पाना भी मुश्किल ही है।

वाहिगुरु जी का खालसा, वाहिगुरु जी की फतहि।

गुरु नानक आगमन

(श्री गुरु नानक चमत्कार)

पद्म भूषण डा. भाई वीर सिंह जी

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जुलाई, पृष्ठ - 49)

इस प्रश्नोत्तर को गुरू जी ने स्वयं सूही म. 1 घरु 7 में इस प्रकार से वर्णित किया है -

कउण तराजी कवणु तुला तेरा कवणु सराफु बुलावा॥
कउणु गुरु कै पहि दीखिआ लेवा कै पहि मुलु करावा॥
मेरे लाल जीउ तेरा अंतु न जाणा ॥
तूं जलि थलि महीअलि भरिपुरि लीणा तूं आपे सरब समाणा ॥ रहाउ ॥
मनु ताराजी चितु तुला तेरी सेव सराफु कमावा॥
घट ही भीतरि सो सहु तोली इन बिधि चितु रहावा ॥
आपे कंडा तोलु तराजी आपे तोलणहारा ॥
आपे देखै आपे बूझै आपे है वणजारा ॥
अंधुला नीच जाति परदेसी खिनु आवै तिलु जावै॥
ता की संगति नानकु रहदा किउ करि मूड़ा पावै॥

अंग - 730

यह बात तो तुमने उन लोगों के बारे में कही है जो कि मंजिले मकसूद पर पहुँच चुके हैं, तुम तो कोई तपस्वी व साधक प्रतीत हो रहे हो लेकिन अभी तक किसी विशेष जमात में प्रवेश कर चुके नहीं प्रतीत हो रहे हैं, इसलिए तुम्हें योग की शिक्षा-दीक्षा ले लेनी चाहिए, जो कि सर्वोत्तम मार्ग है। अतः तुम कानों में कुण्डल धारण करो और किसी दर्शन व भेष को धारण करो क्योंकि बिना किसी गुरू के यूँ ही रहना ठीक नहीं है। उस समय गुरू जी ने उत्तर दिया - केवल चिन्हों को यानि कि गोदड़ी, डण्डा, भस्म, कुण्डल, सिर का मुण्डन, सिंगी बजाना आदि को धारण कर लेना मात्र योग नहीं है। दरअस्ल केवल बातों के द्वारा योग नहीं हो सकता है या फिर कब्रों के पास अथवा श्मशान भूमि में जाकर बैठ जाना योग की प्राप्ति नहीं है। इसी प्रकार से न तो देश व परदेशों में जाकर तीर्थों पर स्नान करना ही योग है और न ही शरीर को अकड़ा कर व आँखें बन्द करके अथवा किसी चीज पर नजर जमा कर बैठे रहने का नाम ही योग है जिसे कि ताड़ी कहा जाता है।

योगी - फिर योग किस का नाम है?

गुरू जी - पहले सतगुरू मिले, फिर शंकाएँ आदि दूर हों, दौड़ते हुए मन को बाँध कर रखा जाए तथा मन के अन्दर ही मन के ऊपर ऐसा प्रभाव डालें कि मन नाम स्मरण करे और यदि मन इधर-उधर दौड़े तो मन ही उसे रोके। यदि मन स्थिर हो तो मन ही सुख प्रदान करने वाला है तब कहीं जाकर अमृत की धार गिरती है। फिर इस प्रकार की सहज समाधि लगती है जो कि रस रूप होती है। हठ की समाधि नहीं वह सहज की समाधि होती है अर्थात फिर चलते-फिरते, उठते-बैठते और गृहस्थ में ही सहज समाधि लगी रहती है अर्थात फिर प्रत्येक समय आत्मिक रस बना रहता है। आप लोग जो सिंग्गी में फूक मारकर शब्द निकालते हो वह शब्द नहीं होता है, शब्द तो वह होता है जो बिना बजाए ही बजता है और जिसका फल होता है - निर्भय पद की प्राप्ति। इस प्रकार जब योग की प्राप्ति हो जाए तो फिर वनों या पर्वतों में छिप कर नहीं बैठ जाना चाहिए बल्कि माया, जो कि शूरवीरों की भांति प्रत्येक को काला कर देने वाली है अपने प्रभाव में ले लेने वाली है, के अन्दर ही निवास करना चाहिए और उसके प्रभाव से इस प्रकार निर्लिप्त रहना चाहिए ताकि माया अपना तनिक सा भी प्रभाव न डाल सके।

यह तो जीवित रहते हुए ही मृतकों की भांति रहने का जीवन है अर्थात जो मन माया के मोह में जीता है, माया मे निवास करता है, वह माया से निर्लिप्त करतार (परमात्मा) के साथ जुड़ा हुआ जीवन व्यतीत करे। वनों में दौड़ कर व भाग कर माया से नहीं बचना है अपितु माया के अन्दर रहते हुए, माया की गिरावट से बचे रहना ही 'जीवित मरना' है।

इस वार्तालाप को गुरू जी ने एक शबद में वर्णित किया है -

जोगु न खिंथा जोगु न डंडै जोगु न भसम चड़ाईऐ ॥
जोगु न मुंदी मूंडि मुडाइऐ जोगु न सिङ्गी वाईऐ ॥
अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोग जुगति इव पाईऐ ॥ 1 ॥ गली जोगु न होई ॥ एक द्रिसटि करि समसरि जाणै जोगी कहीऐ सोई ॥ 1 ॥ रहाउ ॥ जोगु न बाहरि मड़ी मसाणी जोगु न ताड़ी लाईऐ ॥ जोगु न देसि दिसंतरि भविऐ जोगु न तीरथि नाईऐ ॥ अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोग जुगति इव पाईऐ ॥ 2 ॥ सतिगुरु भेटै ता सहसा तूटै धावतु वरजि रहाईऐ ॥ निझरु झरै

सहज धुनि लागै घर ही परचा पाईअै ॥ अंजन माहि निरंजनि रहीअै जोग जुगति इव पाईअै ॥ 3 ॥ नानक जीवतिआ मरि रहीअै अैसा जोगु कमाईअै ॥ वाजे बाझहु सिङ्ंी वाजै तउ निरभउ पदु पाईअै ॥ अंजन माहि निरंजनि रहीअै जोग जुगति तउ पाईअै ॥ 4 ॥ 1 ॥ 8॥ *अंग – 730*

प्रतीत होता है कि इस शबद के बाद सिद्ध इस बात को भली भांति समझ गए कि ये तो सारी बात बहुत ही पते की कर रहे हैं, इसलिए इनके साथ कोई ऊंची बात करनी चाहिए। ये केवल बहस के माध्यम से ही हमारे वश में नहीं आ पाएँगे बल्कि इन्हें किसी अन्य ढंग से अपने साथ मिलाने की कोशिश करनी चाहिए।

अब जिस समय, रात्रिकाल में, जब योगियों में प्याले का दौर चलने का समय आया तो उन्होंने गुरू जी को अपने पास बुलवा लिया तथा भंगरनाथ ने स्वयं एक प्याला भर कर गुरू जी को ग्रहण करने के लिए आग्रह किया।

उस समय गुरू जी ने सवाल किया कि भंगरनाथ जी! यह क्या है? और इसे पीने का क्या लाभ होता है?

योगी - यह रस का प्याला है, इसे पीने से समाधि लग जाती है और फिर मस्ती में अमृतधारा बरसने लगती है तथा अनाहद शब्द बजता है एवं उस दिव्यानन्द के दर्शन होते हैं।

गुरू जी - योगी जी! यह जो आप लोगों ने रस बनाया है यह तो औषधियों का रस है और यह नशा देता है तथा बुद्धि का ह्रास करता है। पहले यह नशा चढ़ता है तथा कुछ समय बाद यह उतर जाता है। जब यह नशा उतरता है तो फिर दिल कुछ खोया खोया सा महसूस करता है। इस मस्ती में जो शब्द होता होगा वह भी दिमाग का शुष्क होना ही होता होगा और नशे में जो दर्शन होते हैं वह भी भ्रान्ति ही होती है। नशे की अवस्था तो अपने ही सोचे-समझे व देखे हुए सामान रूपमान हो जाते हैं, जहाँ पर होश ही न रह जाए तो वहाँ पर शब्द ज्ञान व दर्शन कैसे हो सकते हैं? वहाँ पर तो व्यक्ति तमोगुणी हो जाएगा। हे भंगरनाथ! जो सुरा हमने निर्मित की है, उसके बारे में तुम सुनो! इसके अन्दर हमने ध्यान की औषधि डाली है, करनी की महक इसमें डाली है। प्रेम का पोचा लगाने के बाद हमने ज्ञान की आग इसके नीचे जलाई है। प्रेम का बर्तन है तथा सुरति की फूकनी साथ में है और इस विधि से हमने यह सुरा निर्मित की है। इसके बाद हमने इसे सुरा को दया की सुराही में डाल कर रखा है तथा सहजता के प्याले में डालकर इसे पिया है। इसका फल यह है कि इसे पीने के बाद आठों पहर नशा चढ़ा रहता है। उस नशे का रूप यह है कि प्राणिमात्र में, परमात्मा का प्रेम दिखाई पड़ता है। अपने अन्दर सदैव आनन्द ही आनन्द बना रहता है तथा सुगन्ध की भांति सर्वव्यापक परमात्मा ही प्रतीत होता है। यह दर्शन असीमानन्द वाला होता है और यही आनन्द की लहर सदैव हमारे अन्दर बनी रहती है और यही हमारा सुरापान है।

इस समय जो बातचीत चली थी वह कुछ लम्बी हो गई थी, जिसमें गुरू जी ने उनका प्याला पीना अस्वीकार कर दिया और अपनी युक्ति का प्रयोग करके भी गुरू जी को मना नहीं सके। अन्य विषयों पर की गई वार्तालाप में भी वे गुरू जी को जीत नहीं सके। इसके बाद वे बुरी तरह से चिढ़ गए क्योंकि हार का फल चिढ़ जाना प्रसिद्ध है।

पहले तो वे उन्हें डरा धमका कर व उनके साथ बदसलूकी करके उन्हें भगा नहीं सके। दूसरे हथियार के रूप में वे उन्हें शराब पिलाकर व उन्हें मस्त करके अपने साथ मिला नहीं पाए तथा तीसरे हथियार के तौर पर वे बहस में भी गुरू जी को हरा नहीं सके। अब चौथा हथियार उनका यह था कि जिन रिद्धियों-सिद्धियों के क्षेत्र में वे स्वयं को बहुत शक्तिशाली समझते थे, उसमें गुरू जी को शक्तिहीन साबित कर दें। गुरू जी तो रिद्धियों-सिद्धियों और करामातों को मुक्ति के मार्ग में सुखदाई नहीं अपितु बन्धन कथन करते हैं। सहज समाधि को ही आप वास्तविक करामात बतलाते हैं। आप तो दरगाह से ही अवतार बन कर आए थे और सदैव अकालपुरुष के ध्यान में निवास करते थे। शक्तियाँ तो आपके सामने मौजूद थीं लेकिन आप उनका प्रयोग नहीं करते थे। यदि आपने कभी किसी आत्मिक शक्ति का प्रयोग किया भी तो केवल परोपकारवश किया या फिर किसी के मन को इस हठ में से निकालने के लिए जैसे कि योगीजनों को सिद्धियों की तुच्छता बतलाने के लिए। एकाग्र मन तो सदैव ही शक्तिशाली होता है, जबकि यहाँ पर तो साईं के साथ सदैव जुड़े हुए मन वाले दरगाह से आए हुए दाता जी थे। तवारीख खालसा में लिखा है कि सिद्धों ने अपनी शक्तियों का प्रयोग करना शुरू किया और इसी श्रंखला में उन्होंने जब अपनी मानसिक शक्तियों के द्वारा अपनी गोदड़ी व मृगछाला को जब हवा में उड़ाया तो भाई मरदाना जी ने कहा महाराज जी! इन्हें थोड़ा मजा चखाओ और इनके अहंकार को तोड़ो अन्यथा मुझे तो बहुत शर्म आ रही है। उस समय गुरू जी ने अपनी खड़ाऊँ को हुक्म दिया तो खड़ाऊँ भी हवा में उड़ पड़ी। जब खड़ाऊँ हवा में उड़ी तो योगियों की गोदड़ी व मृगछाला भी आगे-आगे दौड़ने लगे। जब सिद्धों ने अपनी हार मानी तो फिर खड़ाऊँ भी नीचे उतरी।

'चलता'

भाई नन्द लाल जी
गजलें

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक सितम्बर, पृष्ठ - 45)

5.

रहि-रसानि राहि ह्क आमद अदब
हम बदिल यादि खुदा व हम बलब।

परमात्मा के मार्ग पर चलने वाले पथिकों के लिए यह परमावश्यक है कि उनके दिल में भी उसकी याद हो और उनके होठों पर भी सिमरन।

हर कुजा दीदेम अनवारि खुदा
बसकि अज सुहबति बजुरगाँ शुद जजब।

हमने प्रत्येक जगह पर परमात्मा के नूर को महापुरुषों की संगत में जज्ब होते हुए देखा।

चशमि-मा गैर अज जमालश वा ना शुद
जाँ कि जुमला खलक रा दीदेम र्ब।

हमारी आँख उसके जमाल के बिना वास्तव में ही नहीं खुली क्योंकि हमने सारी कायनात में परमात्मा को देखा।

खाकि कदमश रौशनीइ दिल कुनद,
गर तुराबा सालिकाँ बाशद नसब।

उसके चरणों की धूल दिल को रौशन कर देती है यदि तुम्हारा इस मार्ग पर चलने वालों के साथ सम्बन्ध हो -

कीसत गोया कु मुरादि दिल ना याफत
हर कसे बा नफसि खुद करदा गजब।

वह कौन है, गोया जिसके दिल की मुराद पूरी नहीं हुई, जिस किसी ने भी अपने मन (हउमै) को मार लिया हो।

6.

दिल अगर दाना बवद अंदर किनारश यार हसत
चशम गर बीना बवद दर हर तरफ दीदार हसत।

चहुँओर दीदार हैं, परन्तु देखने वाली आँख कहाँ है? चहुँओर तूर की पहाड़ी है, चहुँओर नूर की प्रचंड ज्वाला है।

सर अगर दारी बिरौ सर रा बिनिह बर पाइ उ
जाँ अगर दारी निसारिश कुन अगर दरकार हसत।

यदि तुमहारे पास सिर है तो जाकर सिर को उसके चरणों पर रख दो और यदि तुम्हारे पैरों में चलने की लालसा है तो उस सज्जन की तरफ चलो।

गोश अगर शुनवा बवद जज नामि ह्क कै बिशनवद
वर जुबाँ गोया बवद दर हर सुखन असरार हसत।

यदि कान सुनने वाले हों तो परमात्मा के साथ बिना और कुछ कब सुनते हैं? और यदि जिह्वा बोलने वाली हो तो बात-बात में रहस्यात्मक बात होगी।

ब्रहमन मुशताकि बुत जाहिद फिदाइ खानकाह
हर कुजा जामि मुह्बत दीदाअम सरशार हसत।

ब्राह्मण अपनी मूर्ति का श्रद्धालु है तथा मुसलमान खानकाह का। मैंने जहाँ भी प्रेम प्याला देखा है, मस्त हो गया हूँ।

बे-अदब पा रा मनिह मनसूर वश दर राहि इशक
राह-रवि ईं राह रा अ्वल कदम बर दार हसत।

बेअदबी के साथ मनसूर की भांति प्रीति के मार्ग पर कदम मत रखना। इस मार्ग पर चलने वाले पथिक का पहला कदम तो सूली पर ही होता है।

हर चि दारी दर बसाति खुद निसारि यार कुन
गर तुरा मानिंदि गोया तबाआइ गोहर बार हसत।

यदि तुम्हारी तबियत गोया की भाँति मोती बरसाने वाली है तो भी जो कुछ तुम्हारे पास है उसे अपने सज्जन पर न्यौछावर कर दो।

7.

गदाइ कूइ तुरा मैलि बादशाही नीसत
हवाइ सलतनतो जोकि कजकुलाही नीसत।

तुम्हारी गली के भिखारी को बादशाही की इच्छा नहीं

है। उसे न तो राजभाग की चाह है और न ही बादशाही टेढ़ी टोपी की।

हर आँ कि ममलकति दिल ग्रिफत सुलताँ शूद
कसे कि याफत तुरा हमचू ओ सिपाही नीसत।

जिस किसी ने दिल के मुल्क को जीत लिया है समझो वह सुल्तान हो गया। जिस किसी ने तुम्हें ढूंढ़ लिया है समझो उसके सदृश्य कोई भी सिपाही नहीं है।

गदाइ कूइ तुरा बादशाहि हर दो सरा-सत
असीरि खति तुरा हाजति गवाही नीसत।

तुम्हारी गली का भिखारी दोनों संसारों का बादशाह है। तुम्हारे फूटते वालों के कैदी को मुक्ति की आवश्यकता नहीं है।

कुदाम दीदा कि दर वै सवादि नूरि तू नीसत
कुदाम सीना कि उ मखजनि इलाही नीसत।

कौन सी है वह आँख, जिसमें तेरे नूर की चमक नहीं है? कौन सी है वह छाती, जिसमें परमात्मा का खजाना नहीं है।

फिदाइ उ शौ व उजरे मखाह अै गोया
कि दर तरीकति-माजाइ उजर खाही नीसत।

उसके ऊपर कुर्बान हो जाओ, इसमें कोई बहानेबाजी न करो ऐ गोया, हमारी रीति में बहानेबाजी के लिए कोई जगह नहीं है।

8.

अज पेशि चशम आँ बुति नाँ-मिहरबाँ गुजसत
जानाँ गुजशत ता जि रहे दीदा जाँ गुजशत।

आँखों के आगे से यदि वह कृपावान प्यारा निकल गया तो समझो कि आँखों के द्वारा जान ही निकल गई।

रंगश कबूद करद व दिलश पुर शरारा साखत
अज बसकि दूदि आहि मन अज आसमाँ गुजशत।

मेरी आहों का धुआँ इतना अधिक आसमान से गुजर गया कि उसने आसमान का रंग नीला कर दिया और उसके दिल को जला डाला।

मा रा ब-यक इशाराइ अबरु शहीद करद
अकनूं इलाज नीसत कि तीर अज कमाँ गुजशत

उसने हमें अपनी भौहों के एक ही इशारे के द्वारा शहीद कर दिया लेकिन अब कोई इलाज नहीं है क्योंकि तीर अब कमान में से निकल चुका है।

यक दम ब-खेश राह न बुरदम कि कीसतम,
अै वाइ नकद जिंदगीअम राइगाँ गुजशत।

मैं एक पल के लिए भी अपने मूल को न पा सका, न जान सका कि मैं कौन हूँ? अफसोस! मेरी जिन्दगी की सारी पूँजी यूँ ही चली गई।

हरगिज ब-सैरि रौजाइ रिजवाँ नमी रवद
गोया कसे कि जानबि कुइ बुताँ गुजशत।

गोया! यदि एक बार भी कोई अपने प्यारे की गली में से गुजर जाए, तो वह दोबारा कभी भी बहिशत के बाग की सैर के लिए नहीं जाता है।

आवश्यक निवेदन

रिन्युवल का चन्दा भेजने के लिए मेंबरशिप नम्बर (सदस्यता संख्या) तथा रिन्युवल तारीख (पुनर्नवीनीकरण तिथि) का व्यौरा अवश्य दिया जाए तथा यह भी बतलाया जाए कि चन्दा, रिन्युवल के लिए है अथवा नई मेंबरशिप प्राप्त करने के लिए प्रेषित किया गया है।

यदि किसी प्रेमी पुरुष ने आत्म मार्ग मैगजीन के लिए चन्दा जमा करवाया हो और उसे मैगजीन न पहुँच पा रहा हो, तो उसे जमा करवाई गई रकम का रसीद नम्बर आदि लिखकर आत्म मार्ग कार्यालय से सम्पर्क करना चाहिए।

'आत्म मार्ग' एक धार्मिक मैगजीन है, इसके अन्तर्गत श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी छपी हुई होती है, इसलिए समस्त पाठक बन्धुओं से अनुरोध है कि कृप्या इसका प्रयोग रद्दी पेपर की भांति न किया जाए। यदि आप पुराने मैगजीन को रखना नहीं चाहते हैं तो उन्हें हमारे किसी भी वितरण केन्द्र पर सहर्ष वापिस कर सकते हैं।

नूरानी मिलाप - 5

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

(श्री गुरू नानक देव जी महाराज जी के 2019 में 550 वर्षीय प्रकाश शताब्दी को समर्पित)

मै मूरख की केतक बात है कोटि पराधी तरिआ रे॥
गुरु नानकु जिन सुणिआ पेखिआ से फिरि गरभासि न परिआ रे ॥

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक सितम्बर, पृष्ठ - 55)

कादर की कुदरत

सा धरती भई हरीआवली जिथै मेरा सतिगुरु बैठा आइ॥ से जंत भए हरीआवले जिनी मेरा सतिगुरु देखिआ जाइ ॥ ***अंग - 310***

जहाँ पर भी सतगुरु जी की दृष्टि पड़ी वह वनस्पति लहलहाने लग पड़ी यानि कि वहाँ पर नई बहार व नई रौ रुमकने लग पड़ी। कादर का कुदरत के साथ हमेशा सुमेल ही रहता है। यदि वनस्पति खिलती है तो मनुष्य पीछे कैसे रह सकता है? सारे जीव जन्तु भी खिल उठे तथा नई जीवन युक्ति को प्राप्त करके नाम-वाणी की धारा भी बहने लग पड़ी। अब बाल सतगुरू भी चलने-फिरने लग पड़े लेकिन प्रत्येक समय आपकी सुरति तथा वृत्ति नाम-वाणी में लगी रहती। साधुओं की संगत में आप अधिक समय व्यतीत करते थे। पिता जी घर के कामकाज में लगाना चाहते थे ताकि आप किसी घरेलू कार्य में व्यस्त रहने लगें लेकिन पिता जी को अभी इस चीज के बारे में पता नहीं था कि इन्होंने तो सारी कायनात के कार्य करने हैं। घरेलू कार्यों के सम्बन्ध में विचार विमर्श करने के बाद पिता जी ने आपको भैंसे चराने के कार्य में लगाना उचित समझा। आप जी, पिता जी के हुक्म का पालन करते हुए भैंसियों को चराने के लिए चल पड़ते हैं। वहाँ पर जो घटना घटित हुई उसे ज्ञान व अज्ञान के धारकों की जुबानी इस प्रकार से कथन किया गया है - राए बुलार के पास एक भट्टी आकर फरियाद करता है। वह कहता है राए जी! मैं तो लूटा गया, मेरा न्याय करो। राए जी ने कहा, न्याय करना तो मेरा धर्म है और न्याय मांगना तुम्हारा हक। आप बताओ क्या फरियाद है?

भट्टी - इस बार वर्षा खूब हुई, गेहूं की फसल लहलहाने लगी और मेरा दिल फसल को देखकर खुशी में झूमने लग पड़ा। लेकिन इसके बाद मैं लूटा गया। कालू मेहता के पुत्र की भैंसियों ने मेरा खेत खा लिया। वे (नानक जी) स्वयं तो सोते रहे और पशु खेत को चरते रहे। बाबा कल्याणदास जी को बुलाया गया। सारी सभा के अन्दर बाबा मेहता कल्याण दास जी को उलाहना प्राप्त हुआ और पंचायत का मता पास हुआ कि जाकर मौका-ए-घटना को देखा जाए। दो गणमान्य व्यक्ति तथा वह भट्टी मौका देखने गए लेकिन वे हैरान मुद्रा में वापिस लौट आए। उन्होंने बताया कि खेत तो हरा भरा है और पहले की अपेक्षा और भी अधिक लहलहा रहा है। उन्होंने भरी सभा में रिपोर्ट प्रस्तुत की कि वहाँ पर तो किसी एक तिनके का भी नुक्सान नहीं हुआ है। अर्जी देने वाला भट्टी अपनी आँखों को मलता है कि यह सच्चा है अथवा वह सच्चा है? वह कादर की कुदरत से हैरान हो रहा है और उसे यह भी मलाल है कि वह भरी सभा में झूठा पड़ गया। वह शर्मिन्दा होकर सफाई देने की कोशिश करता है।

राए जी ने स्थिति को समझा तथा कादर की कुदरत को समझते हुए दृश्य व अदृश्य की समझ का प्रयोग किया और कहा कि वे स्वयं मालिक हैं। वे स्वयं ही कुदरत के मालिक हैं। यह कोई योग-लीला उन्हीं के द्वारा घटित की गई है क्योंकि वे बच्चे नहीं हैं। इसके बाद वह भट्टी, सारे गणमान्य व्यक्ति तथा मेहता कल्याणदास जी अपने अपने घरों को चले गए। यह बात अभी पूरी ही हुई थी कि उस परमात्मा का साकार रूप बालक के रसीले गले में से मीठी-मीठी आवाज इस प्रकार से निकली -

जोगी होवै जोगवै भोगी होवै खाइ ॥ तपीआ होवै तपु करे तीरथि मलि मलि नाइ ॥ 1 ॥ तेरा सदड़ा सुणीजै भाई जे को बहै अलाइ ॥ 1 ॥ रहाउ ॥ जैसा बीजै सो लुणे जो खटे सुो खाइ ॥ अगै पुछ न होवई जे सणु नीसाणै जाइ ॥ 2 ॥ तैसो जैसा काढीऐ जैसी कार कमाइ ॥ जो दमु चिति न आवई सो दमु बिरथा जाइ ॥ 3 ॥ इहु तनु वेची बै करी जे को लए विकाइ ॥ नानक कंमि न आवई जितु तनि नाही सचा नाउ ॥
अंग - 730

खेत को हरा भरा देखकर राए जी ने नमस्कार की। गुरू जी ने फुरमान किया -

सची नदरि निहालीऐ बहुड़ि न पावै ताउ ॥ अंग - 19

गुरबाणी अर्थ भण्डार

सन्त हरी सिंह जी रन्धावे वाले

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक सितम्बर, पृष्ठ - 55)

सिरीरागु महला 1 घरु 5
अछल छलाई नह छलै;
नह घाउ कटारा करि सकै।

माया जो अछल है यह किसी के द्वारा छलने से छली नहीं जा सकती है और इसको कटारा = कटार आदि के द्वारा कोई घाउ = घायल यानि कि जख्मी भी नहीं कर सकता है जबकि दूसरी तरफ सौरभ ऋषि जैसों को भी इसने छल लिया है -

जिउ साहिबु राखै, तिउ रहै;
इसु लोभी का जीउ टल पलै॥

बस यह परमात्मा को नहीं छल सकती है क्योंकि यह तो उस प्रभु जी के अधीन है। जिउ = जिस प्रकार से साहिबु = मालिक या प्रभु राखै = रखता है यह माया उसके हुक्म में तिउ = उसी प्रकार से रहती है। यह तो लोभी जीव है, जो इस माया के अधीन है, इस लोभी = लालची जीव का जीउ = मन वाहिगुरू की तरफ से पलै = पल पल ही टल = टलता रहता है।

बिनु तेल; दीवा किउ जलै॥1॥रहाउ॥

हे भाई! प्रत्यक्ष तेल तथा बाती के बिना दीपक कैसे जल सकता है? भावार्थ जल नहीं सकता है, इसी प्रकार से ज्ञान रूपी दीपक भी तेल व बाती के बिना किउ = किस प्रकार से जलै = प्रकाश कर सकता है।

पोथी पुराण; कमाईऐ॥

पोथी = धार्मिक ग्रन्थ, पुराण आदि के सिद्धान्त रूपी वचनों को कमाईऐ = कमाने रूपी तेल डालो।

भउ वटी; इतु तनि पाईऐ॥

प्रभु जी की भउ = भय रूपी बाती को इतु = इस तनि = सूक्ष्म शरीर रूपी ठूठी में पाईऐ = डालो। भावार्थ प्रत्येक समय परमात्मा के भय में जीव को रहना चाहिए क्योंकि वह हमारे अच्छे बुरे कर्मों को हर समय देखता रहता है।

सचु बूझणु; आणि जलाईऐ॥2॥

गुरू साहिब के द्वारा जो सुच = सच्चे प्रभु जी के बारे में बूझणु = शिक्षा प्राप्त करनी है वह आणि = लाकर के जलाईऐ = जला लें। इस विधि से यह ज्ञान रूपी दीपक जग जाएगा और अन्धकार रूपी अज्ञान मिट जाएगा।

इहु तेलु; दीवा इउ जलै॥

यही धार्मिक ग्रन्थ, पुराणों आदि के सिद्धान्तों रूपी वचनों को कमाने रूपी तेल तथा भय रूपी बाती द्वारा इउ = इस प्रकार से ज्ञान रूपी दीवा = दीपक जलै = प्रकाश करता है।

करि चानणु; साहिब तउ मिलै॥1॥ रहाउ॥

हे भाई! इस प्रकार अपने हृदय अथवा अन्तःकरण में ज्ञान रूपी दीपक का चानणु = प्रकाश करो तउ = तभी साहिब = मालिक मिलेगा जो कि सारे खण्डों व ब्रह्मांडों में प्रकाश रूप में अपने अन्दर ही निवास करता है।

इतु तनि; लागै बाणीआ॥

हे भाई! इतु = इस तनि = शरीर का हिसाब-किताब करने के लिए प्रत्येक समय यमराज रूपी बनिया लागै = लगा हुआ है।

सुखु होवै; सेव कमाणीआ॥

गुरू की सेवा कमाने से वह सुख प्राप्त होता है जिस आत्मिक सुख के लिए सारा संसार तरसता रहता है।

सभ दुनीआँ; आवण जाणीआ॥3॥

हे भाई! यह दृष्टिमान सभ = सारी दुनिया सृष्टि आवण = आने तथा जाणीआ = जाने वाली है भावार्थ जन्म लेने व मरने वाली है।

विचि दुनीआ; सेव कमाईऐ॥

जब तक दुनीआ = सृष्टि के अन्दर शरीर के तौर पर हमने रहना है उतनी देर तक हमें गुरु व साधु संगत की सेव = सेवा कमाई और कमानी चाहिए।

ता दरगह; बैसणु पाईऐ॥

तो ही दरगाह = सच्चखण्ड में बैसणु = बैठने के लिए आसण पाईऐ = आसन प्राप्त किया जा सकता है। अथवा प्रभु जी के दर = तुरिया पद में उसके अधिष्ठान रूपी बैसणु = निवास को प्राप्त किया जा सकता है।

कहु नानक; बाह लुडाईऐ॥

सतगुरू नानक देव जी फुरमान करते हैं कि तो फिर बाँह को लुडाईऐ = फैला कर चला जाता है भावार्थ बेफिक्र होकर चला जाता है। ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति करके, वृत्ति रूपी बाँह को फैलाकर, ब्रह्माकार वृत्ति में बेफिक्र होकर, आत्मिक आनन्द में विचरण किया जाता है।

बारां भाई गुरदास
स्टीक

डा. भाई वीर सिंह जी

वार 1

2 पउड़ी (जग्दोत्पत्ति)

प्रिथमै सास न मास सन अंध धुंध कछु खबर न पाई।
रकतबिंद की देहि रचि, पाँच तत की जड़त जड़ाई।

सास = श्वास, मास = शरीर, जड़त = जड़ाव

शुरू में जब श्वास व शरीर कुछ भी नहीं था यानि कि घोर अन्धकार था और कुछ भी समझ नहीं थी। परमात्मा ने माता के रक्त व पिता के वीर्य से शरीर बनाकर पाँच तत्वों के रूप में उसे एक जगह बाँध दिया। इसके आगे आप तत्वों का नाम बतलाते हैं -

पउण पाणी बैसंतरो चउथी धरती संगि मिलाई।
पंचमि विचि आकास करि करता छटमु अदिसटु समाई।

बैसंतरो = अग्नि

वायु, पानी, अग्नि तथा धरती को प्रभु जी एक जगह पर एकत्र कर दिया और पाँचवां आकाश तथा छठा वह स्वयं (कर्ता या परमात्मा) गुप्त रूप में बैठ गया ताकि वह इस जड़ शरीर को सत्ता देकर चलायमान रख सके।

पंच तत पंचीसि गुनि सतरु मित्र मिलि देहि बणाई।
खाणी बाणी चलित करि आवागउणु चरित्र दिखाई।
चउरासी लख जोनि उपाई॥

पाँच तत्व तथा पच्चीस प्रकृतियाँ, जो कि आपस में शत्रु थे, उन्हें मित्र बनकर एक जगह इकट्ठा कर दिया और इस प्रकार से शरीर बना दिया। भावार्थ आग, पानी व मिट्टी जो कि आपस में शेर व बकरी की भांति विरोधी भाव वाले थे, को आपने एक जगह पर एकत्र कर दिया। चारों खाणियाँ (अंडज, जेरज, सेतज, उत्भुज) तथा चारों बाणियाँ परा, पसंती, मध्यमा तथा बैखरी को स्थापित करके आपने आवागमन का चित्र प्रदर्शित कर दिया और इस प्रकार से चौरासी लाख योनियाँ निर्मित कर दीं।

भावार्थ - यह अनादि संसार चला आता है। बरगद के वृक्ष के बीज की भांति यह नहीं कहा जा सकता है कि पहले कर्म हुए या शरीर की उत्पत्ति। श्री जपुजी साहिब का वाक्य है 'थिति वारु ना जोगी जाणै रुति माहु ना कोई।। जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई।।' न्याय शास्त्र वाले परमाणुओं से और सांख शास्त्र वाले तीनों गुणों की समानावस्था से जगत की उत्पत्ति मानते हैं। वेदांत वाले माया से उत्पत्ति मानते हैं। पहले स्वयं भू मुनि तथा सतरूपा उसकी स्त्री बनी। उनकी रक्त-बिन्द से सारी सृष्टि का विस्तार चला आता है क्योंकि घोड़ा व घोड़ी आदि सारी चौरासी लाख योनियों के नर व मादा वे दोनों बन जाते हैं। लेकिन यदि सत्य बात कथन की जाए तो सबका आदि कारण ईश्वर ही है। कर्म, चेतन सत्ता के बिना जड़ ही हैं। यदि कोई शून्यवादी शंका करे कि जगत की उत्पत्ति के पहले शून्य ही था क्योंकि 'अरबद नरबद धुँधूकारा' अर्थात अनगिनत शून्य का ही विस्तार था, इसलिए शून्य ही आत्मा क्यों न बनी? हम उसे पूछते हैं कि शून्य को सिद्ध करने वाला यानि कि उसी शून्य की साखी ही तो न्यारी आत्मा है। उसी ने तो पाँच तत्वों के शरीरों की रचना करके सारी सृष्टि की रचना की है। इसी प्रकार से परमाणु प्रधान कर्म आदि सारे जड़ हैं और ये चेतन आत्मा की सत्ता के बिना कुछ भी नहीं कर सकते हैं। अब शून्य आदि सारे मतों का खण्डन करके आगे सारी योनियों में से उत्तम योनि का वर्णन करते हैं।

गुर रामदासु राखहु सरणाई

(प्रकाश दिवस 26 अक्टूबर 2018)

डा. जगजीत सिंह

श्री गुरू रामदास जी सिक्ख धर्म के चौथे गुरू महाराज जी हैं। आप जी का प्रकाश चूना मण्डी लाहौर में पिता श्री हरदास जी तथा माता श्रीमती दया कौर जी के गृह में 25 सितम्बर सन् 1524 ई. को हुआ। माता-पिता की प्रथम सन्तान होने के कारण आप जी को 'जेठा' कहकर पुकारा जाता था और यही नाम प्रसिद्ध हो गया। आप जी का एक छोटा भाई था हरदयाल और एक छोटी बहन थी रामदासी। आप जी की छोटी बहन की उम्र अभी सात वर्ष की ही थी कि आप जी के माता दाय कौर जी का देहान्त हो गया। परिवार बहुत बुरी तरह से मुश्किलों में घिर गया। अभी थोड़ा समय ही गुजरा था कि आपके पिता श्री हरदास जी भी परमात्मा को प्यारे हो गए। अब तो परिवार को और भी अधिक दुखों व आर्थिक तंगी ने घेर लिया। आपके नानके, गाँव बासरके के रहने वाले थे। (गुरू) अमरदास जी का जन्म स्थान तथा परिवार का निवास स्थान बासरके ही था। आपकी नानी जी आपको तथा आपके दोनों बहन-भाइयों को बासरके ले आए। (गुरू) अमरदास जी के परिवार के साथ आपकी पुरानी जान पहचान थी। उन्होंने हौंसला दिया और प्रत्येक प्रकार की सहयाता के मीठे वचन कहे जिससे परिवार में धैर्य बँध गया। परिवार के गुजारे के लिए आप कई वर्ष नानी जी द्वारा बनाई हुई घुंघणियाँ बेचते रहे तथा (गुरू) अमरदास जी के सत्संग का आनन्द उठाते रहे। श्री गुरू अंगद देव जी का आदेश मानकर (गुरू) अमरदास जी गोइन्दवाल आ बिराजे और आपने इसके नव निर्माण के लिए और भी काफी परिवारों को यहाँ आकर बसने के लिए उत्साहित किया। जेठा जी का परिवार भी यहाँ पर आकर बस गया। आप जी पहले की भांति ही दिन में घुंघणियाँ बेचते तथा शाम को (गुरू) अमरदास जी द्वारा किए जाते सत्संग का आनन्द उठाते। (गुरू) अरमदास जी भी बालक जेठा जी को बहुत प्यार किया करते थे।

29 मार्च सन् 1552 में श्री गुरू अंगद देव जी ने उनकी भक्ति व सेवा को ध्यान में रखते हुए (गुरू) अमरदास जी को गुरुगद्दी प्रदान कर दी, फलस्वरूप आप जी को तीसरी पातशाही का पद प्राप्त हुआ। भाई जेठा जी पूरी मेहनत से जीविकोपार्जन करते एवं गुरू घर की पूरी लगन से सेवा करते तथा गुरू जी के वचनों की पालना करते। आपने गुरवाणी को जीवन का आधार बनाया तथा गुरू अमरदास जी के प्यार के पात्र बने। आनन्दमयी जीवन युक्ति में विचरण करते हुए सुन्दर नयन-नक्शे वाले मनमोहक नवयुवक गुरू जी की कृपादृष्टि में स्वीकार्य हो गए। जब माता जी ने अपनी बेटी भानी जी के लिए अच्छे वर की तलाश के लिए वचन किया तो आपने अपनी दिली भावना को व्यक्त करते हुए कहा कि मेरी बेटी के लिए तो इस प्रकार का सुन्दर व सुशील वर मिलना चाहिए जैसे कि भाई जेठा जी हैं। गुरू अमरदास जी ने सहजता के साथ वचन किया कि इसके जैसा तो फिर यही है, अन्य कोई नहीं। गुरू जी की कृपा प्राप्त हुई फलस्वरूप सन् 1553 ई. में तीसरे पातशाह जी ने अपनी बेटी भानी जी का विवाह भाई जेठा जी के साथ कर दिया जो कि बाद में गुरू रामदास जी के रूप में चौथे गुरू बने। गोइन्दवाल में बाउली की सेवा में जेठा जी सांसारिक रिश्ते के अनुसार गुरू घर के दामाद होते हुए भी पूरी लगन व मेहनत से गारा, मिट्टी व चूना आदि की टोकरी ढोते रहे। लाहौर से आए रिश्तेदारों ने आपको उलाहने व ताने भी दिए लेकिन आपने किसी की कोई परवाह नहीं की। गुरू अमरदास जी ने भी, दिए गए तानों व कटाक्षों का अत्यन्त शान्त स्वर में उत्तर दिया कि सिर पर उठाई हुई टोकरी का तो कोई खास बोझ नहीं है, परमात्मा ने लोक भलाई के न जाने कितने महान कार्यों का बोझ इनके सिर पर रखना है और इनके माध्यम से सम्पूर्ण मानवता का कल्याण होना है। 'साध बचन अटलाधा' के अनुसार ऐसा ही हुआ।

सिक्खी के दायरे को विशाल होता देखकर सन् 1507 ई. में गुरू अमरदास जी ने (गुरू) रामदास जी को नया स्थान बसाने के लिए प्रेरित किया। अतः आप जी ने बाबा बुड्ढा जी को अपने साथ लेकर पहले सन्तोषसर सरोवर की खुदाई

आरम्भ की और बाद में नए नगर की नींव रखी और उसका नाम रखा 'गुरू का चक'। बाद में श्री गुरू अरजन देव जी ने इसका नाम 'चक रामदास' रख दिया और अमृत सरोवर की मान्यता बढ़ जाने के कारण तथा आबादी बढ़ जाने के कारण शहर का नाम 'अमृतसर साहिब' प्रसिद्ध हो गया। सन् 1574 ई. में गुरू अमरदास जी ने सारी संगत के सन्मुख भाई जेठा जी (रामदास जी) को गुरुगद्दी प्रदान की तथा आप जी गुरू रामदास जी के रूप में सम्बोधित होने लगे। जब गुरु अमरदास जी ने गुरुगद्दी प्रदान करके गुरु रामदास जी के आगे मत्था टेका तो गुरू जी के अन्दर जो वैराग्य उत्पन्न हुआ, उसे याद करके उन भावों को आप जी ने निम्न लिखित शब्द के माध्यम से इस प्रकार प्रकट किया -

जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा
सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ॥
हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता
गुर सतिगुर संगि कीरे हम थापे ॥ ***अंग - 167***

भाई गुरदास जी ने भी इस अनूठी घटना को अपने अनुभव के द्वारा इस रूप में प्रकट किया -

बैठा सोढी पातिशाह रामदास सतिगुरु कहावै।

गुरू रामदास जी का अभिनन्दन करते हुए बलवंड तथा सत्ता ने भी गुरू जी को धन्यता योग्य कहा -

धंनु धंनु रामदास गुरु जिनि सिरिआ तिनै सवारिआ॥
अंग - 968

गुरुगद्दी पर बिराजमान होकर आप जी ने अनेकों महान कार्य किए लेकिन विनम्रता, सहनशीलता व उदारता का दामन आपने कभी भी नहीं छोड़ा। आप जी की रचनाओं में से आप जी की नम्रता बार-बार परिलक्षित होती है -

हम कीरे किरम सतिगुर सरणाई
करि दइआ नामु परगासि ॥ ***अंग - 10***

हम पापी पाथर नीरि डुबत
करि किरपा पाखण हम तारी ॥ ***अंग - 666***

किआ हम किरम नान् निक कीरे
तुम् वड पुरख वडागी ॥ ***अंग - 667***

नम्रता की एक ऐसी ही घटना बहुत प्रसिद्ध है कि जब बाबा श्री चन्द जी ने आप जी के दर्शन किए तो बाबा जी ने कहा कि आपने इतना लम्बी दाढ़ी क्यों बढ़ाई हुई है? उस समय आप जी ने अपनी लम्बी दाढ़ी (दाढ़ा) को हाथ में पकड़ कर कहा कि 'आप जैसे महापुरुषों के चरणों को झाड़ने के लिए'। बाबा जी निरुत्तर हो गए और आपने फुरमाया तुम विनम्रता की मूर्ति हो इसीलिए 'गुरु' पद को प्राप्त हुए हो।

गुरु रामदास जी के द्वारा सम्पन्न हुए कुछ विशेष कार्य

1) चक रामदास जी की नींव रखी जो कि धीरे धीरे सिक्खी का एक महान केन्द्र होकर प्रकट हो गया। दुखभंजनी बेरी के पास आप जी ने सन् 1577 ई. में एक तालाब बनाया जिसे कि बाद में गुरू अरजन देव जी ने एक विशाल सरोवर में परिवर्तित कर दिया। आज दरबार साहिब 'अम्रितसर सिफती दा घरु' संसार के मानचित्र पर एक अद्वितीय स्थान के तौर पर प्रसिद्ध है। श्री दरबार साहिब अमृतसर की ऐसी उपमा श्री गुरू अरजन देव महाराज जी ने स्वयं भी की है -

डिठे सभे थाव नही तुधु जेहिआ ॥
बधोहु पुरखि बिधातै ताँ तू सोहिआ ॥
वसदी सघन अपार अनूप रामदास पुर ॥
हरिहाँ नानक कसमल जाहि नाइऐ रामदास सर ॥
अंग - 1262

2) सिक्खी के प्रचारार्थ आपने मसन्द प्रणाली शुरू की। ऊंचे चरित्र वाले तथा कथनी व करनी के पूरे गुरसिक्ख इस सेवा को निभाने लग पड़े।

3) गुरू नानक देव जी की परम्पराओं को आगे बढ़ाया। संगत, पंगत, कीर्तन, सेवा, भाईचारे वाला संगठन, सुबह-शाम के दीवान आदि बहुत ही बुलन्दावस्था में होते रहे।

4) आप जी ने चार लावां की रचना करके विवाह की सिक्ख मर्यादा को कायम किया। सिक्खी, माया में उदास रहने की कला है अर्थात यह माया व त्याग का संगम है। आज लावां का पाठ तथा गायन ही सिक्ख विवाह का मूल धुरी है जो कि सिक्ख समाज तथा सरकार द्वारा स्वीकृत है।

5) श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी में दर्ज आप जी की वाणी परम्परा के अनुसार रागों में विभाजित है। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी में आए हुए कुल 31 रागों में से 30 रागों में, आप जी ने गुरवाणी का उच्चारण किया। केवल एक राग, जिसमें केवल श्री गुरू तेग बहादुर जी की वाणी दर्ज है, उसे छोड़कर सभी रागों में आपने गुरवाणी का गायन किया है। श्री गुरू नानक देव जी ने 19 रागों में, गुरु अंगद देव जी के तो केवल श्लोक हैं, गुरू अमरदास जी ने 11 नए रागों में गुरवाणी की रचना संगीत कला के माध्यम से करके अपना अद्वितीय योगदान दिया। आप जी ने 246 पदों की रचना की जिनमें

दुपदे, चौपदे व पंचपदे शामिल है। आपने 31 अष्टपदियाँ लिखीं। लोक काव्य रूपों में पहरे, बनजारे, करहले, घोड़ियाँ व छन्दों की रचना की। 138 श्लोक उच्चारण किए तथा 8 वारें लिखीं जिनमें 183 पउड़ियाँ हैं। 'पड़तालों' में की गई रचना आप जी की विलक्षण देन है। इनका गायन कोई विरला संगीतज्ञ ही कर सकता है। आप जी की वाणी का प्रधान विषय है - प्रभु प्रेम, वैराग्य, मिलाप की तड़प (विरह व्यथा)। इनके साधन के तौर पर गुरू का ध्यान, नाम सिमरन, साधु संग, सेवा, वाणी, कीर्तन, शब्द विचार को कथन किया है जिसकी प्राप्ति के लिए ब्रह्ममुहुर्त, शौच, स्नान, सदाचारी गुण आदि को आवश्यक बताया गया है। आप जी द्वारा दर्शाई गई गुरसिक्ख की परिभाषा, सारे सिक्ख जगत में स्वीकार की गई है और इसे प्रायः पढ़ा व गाया जाता है -

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए
सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥
उदमु करे भलके परभाती
इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥
उपदेसि गुरु हरि हरि जपु जापै
सभि किलविख पाप दोख लहि जावै ॥
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै
बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै ॥
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि
सो गुरसिखु गुरु मनि भावै ॥
जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी
तिसु गुरसिख गुरु उपदेसु सुणावै ॥
जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥ *अंग - 305*

श्री गुरू रामदास जी के तीन सपुत्र थे, सबसे बड़े पिरथीचन्द जी सांसारिक वृत्ति वाले व अच्छी प्रबन्धकीय सूझ वाले, कारोबार का प्रबन्ध व सम्भाल करने वाले थे लेकिन आपका ध्यान, नाम वाणी व सिमरन साधना में नहीं था। दूसरे पुत्र महादेव जी वैराग्मयी स्वभाव वाले व त्यागी वृत्ति के स्वामी थे और आप किसी भी कामकाज में रुचि नहीं रखते थे। तीसरे (गुरू) अरजन देव जी, गुणवान, आज्ञाकारी, नाम रसिक व हरमन प्यारे स्पुत्र थे, जिन्हें गुरुगद्दी के योग्य समझते हुए सन् 1581 ई. में श्री गुरू रामदास जी ने गुरुगद्दी प्रदान कर दी और सितम्बर में आप जी ब्रह्मलीन हो गए।

भट्ट साहिबान के सवैयों में प्राप्त गुरू रामदास जी की मनोहर शख्सियत

गुरू अरजन देव जी की दस्तारबन्दी के समय दूर-दूर से सिक्ख संगत गुरू अरजन देव जी के दर्शनार्थ आई। प्रो. साहिब सिंह जी के अनुसार उन्हीं दिनों भट्ट लोग भी संगत के साथ गोइन्दवाल साहिब आए। गुरू जी के दीदार करके आप लोगों के मन में गुरू की स्तुति करने का चाव उत्पन्न हो गया। फलस्वरूप आपने गुरू जी की उपमा में सवैयों का उच्चारण किया, जिन्हें समय-समय पर गुरू अरजन देव जी ने श्री मुखवाक्य सवैयों समेत श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी में दर्ज किया। कुल 11 भट्ट साहिबान हैं जिनके नाम इस प्रकार से हैं - 1) कल सहार (जिसके दूसरे नाम 'कल्ल' तथा 'टल्ल' है), 2) जालप (जिसका दूसरा नाम 'जल्ल' है, (3) कीरत, 4) भिक्खा, 5) सल्ल, 6) भल्ल, 7) नल्ल, 8) गयन्द, 9) मथुरा, 10) बल्ल तथा हरिबंस।

इन सवैयों में केवल गुरू जी की बड़ाई की गई है। गुरू की उपमा करते समय 'गुरु व्यक्ति' की उपमा का होना स्वाभाविक बात थी। अतः इन भट्ट साहिबानों ने श्री गुरू नानक देव जी से लेकर श्री गुरू अरजन साहिब जी तक प्रत्येक गुरू महले की स्तुति उच्चरित की है।

भट्ट कलसहार ने गुरू रामदास जी की स्तुति में 13 सवैये उच्चरित किए हैं। पहले सवैये में ही आप जी विनती करते हैं कि सतगुरू (गुरू रामदास जी) मेरी दास की यह उम्मीद पूरी करो कि मैं एकाग्र चित्त होकर व माया से रहित होकर अकालपुरुष का सिमरन करूँ, गुरु कृपा के द्वारा हरि जी का गुणगान करूँ तथा गुणगान करते हुए मेरे मन में चाव व उल्लास उत्पन्न हो -

इक मनि पुरखु निरंजनु धिआवउ ॥
गुर प्रसादि हरि गुण सद गावउ ॥
गुन गावत मनि होइ बिगासा ॥
सतिगुर पूरि जनह की आसा ॥ *अंग - 1396*

आप जी आगे फुरमान करते हैं -

सतिगुरु सेवि परम पदु पायउ ॥
अबिनासी अबिगतु धिआयउ ॥
तिसु भेटे दारिदु न चंपै ॥
कलु सहारु तासु गुण जंपै ॥ *अंग - 1369*

अर्थात जिस गुरू रामदास जी ने गुरू अमरदास जी की सेवा करके उच्च पदवी प्राप्त की है तथा अविनाशी व अदृश्य हरि जी का सिमरन किया है, उस गुरू रामदास जी के चरणों के साथ जुड़ने से कोई भी दरिद्र या दुख पास में नहीं आता है और कलसहार कवि उस गुरू रामदास जी का गुणगान करता है -

जंपउ गुण बिमल सुजन जन केरे
अमिअ नामु जा कउ फुरिआ ॥
ईन सतगुरु सेवि सबद रसु पाया
नामु निरंजन उरि धरिआ ॥ *अंग - 1369*

मैं उस श्रेष्ठ जन (गुरू अमरदास जी) के निर्मल गुण गाता हूँ, जिसे आत्मिक जीवन देने वाले नाम का अनुभव हुआ है, इस (गुरू रामदास जी) ने गुरू (अमरदास जी की सेवा करके) शब्द का आनन्द प्राप्त किया है तथा निरंजन के नाम को हृदय में बसाया है।

सवैये की अन्तिम पंक्तियाँ हैं -

हरि नाम रसिकु गोबिंद गुण गाहकु
चाहकु तत समत सरे ॥
कवि कलु ठकुर हरदास तने
गुर रामदास सर अभर भरे ॥ *अंग - 1369*

अर्थात - हे कलसहार कवि! ठाकुर हरिदास जी के सपुत्र (गुरू रामदास जी) हृदय रूपी खाली सरोवरों को भरने वाले हैं। गुरू रामदास जी अकालपुरुष के नाम रसिक है, गोबिंद गुणों के ग्राहक हैं, अकालपुरुष के साथ प्यार करने वाले हैं तथा समदृष्टि के सरोवर है।

पाँचवें सवैये में आप जी फुरमान करते हैं कि गुरू रामदास जी को अविनाशी प्रभु जी के साथ अभेदता प्राप्त हो गई है।

नानक प्रसादि अंगद सुमति
गुरि अमरि अमरु वरताइओ ॥
गुर रामदास कलुचरै तैं अटल अमर पदु पाइओ ॥
अंग - 1397

अर्थात - कवि कलसहार कथन करता है कि गुरू नानक देव जी की कृपा से तथा गुरू अंगद देव जी द्वारा प्रदत्त सुन्दर बुद्धि के द्वारा गुरू अमरदास जी ने अकालपुरुष के हुक्म का पालन किया है। हे गुरू रामदास जी! आप जी ने सदैव स्थिर रहने वाले तथा अविनाशी हरि जी की पदवी प्राप्त कर ली है।

भट्ट कल्ल का दूसरा नाम भट्ट नल्ल है। इस नाम के नीचे आप जी ने 16 सवैये उच्चरित किए हैं। इनमें आप जी ने यानि कि श्री गुरू नानक देव जी, गुरू अंगद देव जी, गुरू अमरदास जी तथा गुरू रामदास जी को अकालपुरुष द्वारा प्रदत्त एक ही ज्योति का प्रकाश माना है -

प्रथमे नानक चंदु जगत भयो आनंदु
तारनि मनुख्ख जन कीअउ प्रगास ॥
गुर अंगद दीअउ निधानु अकथ कथा गिआनु
पंच भूत बसि कीने जमत न त्रास ॥ *अंग - 1399*

अर्थात पहले गरू नानक देव जी चन्द्रमा के रूप में प्रकट हुए, मनुष्यों का उद्धार कने के लिए आप जी ने प्रकाश किया और सारे संसार को खुशी हुई। फिर गुरू नानक देव जी ने गरू अंगद देव जी को हरि जी की अकथ कथा का ज्ञान प्रदान किया जिस कारण से गुरू अंगद देव जी ने कामादिक पाँचों वैरियों को वश में कर लिया और फिर इनका डर ही न रहा।

गुर अमरु गुरु श्री सति कलिजुगि राखी पति
अघन देखत गतु चरन कवल जास ॥
सभ बिधि मानिउ मनु तब ही भयउ प्रसंनु
राजु जोगु तखतु दीअनु गुर रामदास ॥ 4 ॥
अंग - 1399

अर्थात - फिर गुरू अंगद देव जी की कृपा से श्री गुरू अमरदास जी प्रकट हुए। उन्होंने कल्युग की इज्जत रखी। आप जी के चरण कमलों का दर्शन करके कल्युग के सारे पाप नष्ट हो गए। जब गुरू अमरदास जी का मन पूर्णरूपेण प्रसन्न हो गया तो उस समय उन्होंने गुरू रामदास जी को राजा योगी वाला तख्त सौंप दिया।

अगले 13 सवैये भट्ट गयंद जी के हैं। आप जी ने भी गुरू नानक देव जी की ज्योति का प्रकाश दूसरी, तीसरी व चौथी पातशाही गुरू रामदास जी में प्रकट हुआ बताया है -

गुरु नानकु निकटि बसै बनवारी ॥
तिनि लहणा थापि जोति जगि धारी ॥
लहणै पंथु धरम का कीआ ॥
अमरदास भले कउ दीआ ॥
तिनि श्री रामदासु सोढी थिरु थपुउ ॥
हरि का नामु अखै निधि अपुउ ॥ *अंग - 1401*

अर्थात - गुरू नानक देव जी, अकालपुरुष के नजदीक निवास करते हैं उन्होंने भाई लहणा जी को निवाज कर ईश्वरीय ज्योति जगत में प्रकाशमान की। भाई लहणा जी ने धर्म का मार्ग चलाया तथा नाम-धर्म की कृपा गुरू अमरदास जी को सौंपी। गुरू अमरदास जी ने नाम की अमूल्य निधि सोढी गुरू रामदास जी को प्रदान की।

एक बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि गयन्द के इन सवैयों में गुरू रामदास जी की उपमा में 'वाहिगुरू' शब्द का पहली बार प्रयोग हुआ है -

सति साचु श्री निवासु आदि पुरखु सदा तुही ॥

वाहिगुरु वाहिगुरु वाहिगुरु वाहि जीउ॥

अंग - 1402

अर्थात - हे गुरू जी! तुम आश्चर्य हो, तुम अटल हो, तुम ही लक्ष्मी का टिकाना हो, तुम आदि पुरुष हो, तुम सदैव स्थिर हो। गुरू रामदास जी की स्तुति में इसका गायन साधु संगत में विशेष तौर पर किया व सुना जाता है, जैसे कि निम्नलिखित सवैया है -

सेवक कै भरपूर जुगु जुगु वाहगुरु तेरा सभु सदका ॥
निरंकारु प्रभु सदा सलामति कहि न सकै
कोउ तू कद का ॥
ब्रहमा बिसनु सिरे तै अगनत
तिन कउ मोहु भया मन मद का ॥
चवरासीह लख जोनि उपाई
रिजक दीआ सभ हू कउ तद का ॥
सेवक कै भरपूर जुगु जुगु वाहिगुरु तेरा सभु सदका ॥

अंग - 1403

गुरू रामदास जी की उपमा में मथुरा भट्ट ने सात सवैयों का उच्चारण किया है। मथुरा जी के अनुसार सारे युगों में घूमता हुआ कोई मुनि, परमात्मा का ध्यान धरता है, अन्दर का प्रकाश ढूँढ़ना जिस का यश, ब्रह्मा, वेद-बाणी सहित गाता है, जिसके दर्शनों के लिए अनेकों योगी जती, सिद्ध व साधकजन तपस्या करते हैं, जटाजूट रहकर उदास भेष धारण करके घूमते हैं, उस हरि रूप गुरू अमरदास जी ने सहज-स्वभाव जीवों पर कृपा की और गुरू रामदास जी को हरि नाम का बड़ाई प्रदान की -

जा कउ मुनि धिआनु धरै फिरत सगल जुग
कबहु क कोउ पावै आतम प्रगास कउ ॥
बेद बाणी सहित बिरंचि जसु गावै जा को
सिव मुनि गहि न तजात कबिलास कंउ ॥
जा कौ जोगी जती सिध साधिक अनेक तप
जटा जूट भेख कीओ फिरत उदास कउ॥
सु तिनि सतिगुरि सुख भाइ क्रिपा धारी जीअ
नाम की बडाई दई गुर रामदास कउ ॥अंग - 1404

बल्ल भट्ट ने गुरू रामदास जी की उपमा में पाँच सवैये उच्चरित किए हैं, जिनका उच्चारण ब्रह्ममुहुर्त में श्री दरबार साहिब अमृतसर में, प्रथम प्रकाश के अवसर पर, अन्य भट्ट वाणी के साथ, बड़े ही प्यारपूर्वक किया जाता है। एक सवैया उदाहरण के तौर पर हाजिर है -

जिह सतिगुर सिमरंत
नयन के तिमर मिटहि खिनु ॥
जिह सतिगुर सिमरंथि
रिदै हरि नामु दिनो दिनु ॥
जिह सतिगुर सिमरंथि
जीअ की तपति मिटावै ॥
जिह सतिगुर सिमरंथि
रिधि सिधि नव निधि पावै ॥
सोई रामदासु गुरु बलु भणि
मिलि संगति धंनि धंनि करहु ॥
जिह सतिगुर लगि प्रभु पाईऐ
सो सतिगुरु सिमरहु नरहु ॥ *अंग - 1405*

अर्थात - जिस सतगुरू (गुरू रामदास जी) का सिमरन करने से समस्त दुख क्षणभर में ही कट जाते हैं, जिस गुरू का सिमरन करने से हृदय में हरि जी का नाम दिन प्रतिदिन परिपक्व होता है, जिस गुरू का सिमरन करने से जीव के हृदय की तप्त मिटती है, जिस गुरू का सिमरन करने से जीव रिद्धियाँ, सिद्धियाँ व नौ निद्धियाँ प्राप्त कर लेता है, ऐसे गुरू रामदास जी के बारे में बल्ल कवि कहता है कि ऐ प्रेमीजनो! तुम उस गुरू का सिमरन करो तथा सारी संगत में मिलजुल कर सामूहिक रूप से कहो, तुम धन्य हो, तुम धन्य हो, तुम धन्य हो।

भट्ट कीरत के 4 सवैये श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर दर्ज हैं। एक सवैया, जो कि बहुत प्रसिद्ध है और लगभग रोज ही श्री दरबार साहिब जी के रागी जनों द्वारा अथवा ब्रह्ममुहुर्त में श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के प्रकाश के समय गायन किया जाता है, इस प्रकार से है -

हम अवगुणि भरे एकु गुणु नाही
अंम्रितु छाडि बिखै बिखु खाई ॥
माया मोह भरम पै भूले
सुत दारा सिउ प्रीति लगाई ॥
इकु उतम पंथु सुनिओ गुर संगति
तिह मिलंत जम त्रास मिटाई ॥
इक अरदासि भाट कीरति की
गुर रामदास राखहु सरणाई ॥ *अंग - 1406*

अर्थात - हम अवगुणों से भरे हुए हैं, हमारे अन्दर एक भी गुण नहीं है, अमृत रूपी नाम को छोड़कर हम केवल विषय-विकारों की विष ही खाते रहते हैं। माया के मोह तथा भ्रमों में पड़कर हम अपने जीवन के मार्ग से भटक चुके हैं और पुत्र व स्त्री के प्यार में व्यस्त हो चुके हैं।

(शेष पृष्ठ 54 पर)

स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार
(Inspired Thoughts of Swami Ram)

डा. स्वामी राम जी

अनुवादक - शमशेर सिंह 'कोमल'

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक सितम्बर, पृष्ठ - 52)

तुम्हें दूसरों से खुशी की उम्मीद नहीं रखनी चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति पूछता है कि तुम मुझे प्यार करते हो? इस बात की कोई आवश्यकता नहीं होती है। तुम स्वयं अपने अन्दर देख सकते हो कि तुम दूसरों को कितना प्यार करते हो? दूसरे को यह मत पूछे कि तुम मुझे कितना प्यार करते हो? वह प्यार नहीं बल्कि एक आशा है, उम्मीद है। तुम दूसरे से बहुत अधिक उम्मीद रख रहे हो। तुम केवल प्यार करो, सवाल मत पूछो। आज सारा संसार दुखी है क्योंकि हरेक व्यक्ति पूछता है कि तुम मुझे प्यार करते हो? तुम यह उम्मीद करते हो कि दूसरे तुम्हें प्यार करें लेकिन तुम प्यार नहीं करते। प्यार का तात्पर्य है - सचेतनता। यदि तुम यह जान जाओ, समझ जाओ कि प्रत्येक के अन्दर प्रत्येक के दिल में अनन्तता है, वह स्वयं है तो फिर तुम उसे प्यार करोगे। तुम उसे प्यार करोगे। तुम यह कह सकोगे कि मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। मैं तुम्हारे शरीर को नहीं, तुम्हारी इन्द्रियों को नहीं बल्कि मैं तो तुम्हारे अन्दर निवास करते हुए परमात्मा को प्यार करता हूँ, तुम्हारे अन्दर जाग रही ज्योति को प्यार करता हूँ। जब तुम दूसरों को प्यार करते हो तब तुम स्वयं को ही प्यार करते हो। फिर यह बहुत ही सरल हो जाता है। तुम अपनी धारणा यानि कि जीवन के बारे में रुचि बदलो। जीवन को एक कविता बनाओ, सुन्दर बनाओ।

मुझे हिमालय के एक ब्रह्मज्ञानी मिले। वे कहने लगे कि मुझे समझ में नहीं आता है कि लोग इतनी परेशान क्यों रहते हैं, जबकि जीवन को भोगना व जीना बहुत ही सरल है। मैंने उनसे पूछा कि क्या आप इस रहस्य को बताने की कृपा करेंगे? वे कहने लगे जीवन में अनुकूलता व समायोजना की जरूरत है। जीवन लक्ष्य है - सन्तुष्टता लेकिन जो लोग जीवन में अनुकूलता को ही नहीं जानते हैं, वे अपने लक्ष्य की प्राप्ति कैसे कर सकते हैं? सारी समस्या तो तुम्हारे अपने अन्दर ही है, उसे समझने व जानने की जरूरत है क्योंकि अपने अन्दर को जानकर व समझ कर ही तुम खुश रह सकते हो।

आज के लोगों को अपने अन्दर झांकने का या अपने अन्दर देखने का समय ही नहीं है। वे तो शान्ति सहित कुछेक मिनट भी नहीं बैठ सकते हैं। यदि वे यत्न भी करते हैं तो भी वे सोचने लग पड़ते हैं। फलस्वरूप वे पुनः अशान्त हो जाते हैं। वास्तव में सोचने के कारण अशान्ति नहीं होती है। अशान्ति तो हमारे अनियन्त्रित संवेगों के कारण ही होती है। तुम चाहे कितने ही सयाने हो, चाहे कितना ही कुछ जानते हो लेकिन इस सबका कुछ भी लाभ नहीं है। इस बात का सर्वाधिक लाभ तभी होगा जब तुम अपने संवेगों को नियन्त्रित कर लोगे। अपने संवेगों को नियन्त्रित करने के लिए पुस्तकों की पढ़ाई सहायक नहीं हो पाती है। यदि तुमने ग्रन्थ भी पढ़े हैं तब भी तुम खुश नहीं रह सकते हो, जब तक कि तुम अपने संवेगों को नियन्त्रित नहीं करोगे। अतः आवश्यकता है संवेगों को समझने की कि वे कहाँ से उठ रहे हैं? वे तुम्हारे लिए समस्या क्यों उत्पन्न कर रहे हैं। तुम्हें अपने संवेगों को नियन्त्रित करना ही पड़ेगा, उन्हें नकारात्मक से सकारात्मक करना ही पड़ेगा। अपने शब्दों व अपने काम काज को तुम नियन्त्रित कर सकते हो इसी को कहते हैं, अपनी मनोवृत्ति को बदलना। किसी दूसरे को यह नहीं पता है कि तुम क्या सोचते हो लेकिन बाहरी संसार को तुम्हारे शब्दों से पता चलता है और यहीं से तुम्हारी शेष संसार के साथ साझेदारी स्थापित होती है। अतः यदि तुम अपनी कथनी व करनी को दिशा दे दो तो तुम्हें शान्ति के साथ जीना व रहना आ जाएगा। गोली लगने का निशान या जख्म तो ठीक हो सकता है लेकिन शब्दों का जख्म ठीक नहीं हो सकता है। यदि किसी ने फीके शब्द बोले हों तो उनको तुम कभी भी भूल नहीं सकते हो। वह जख्म तो भर ही नहीं सकता है। कथनी तथा करनी में बहुत बड़ी शक्ति है। अतः जो अपनी कथनी व करनी को ठीक रख सकते हैं, वे ही खुश रह सकते हैं क्योंकि हमारी करनी के पीछे सदा ही प्रेरणा होती है और उस प्रेरणा को इच्छा कहते हैं। यदि तुम यह कहते हो कि मुझे माफ करना मुझे पता नहीं है कि मैंने यह क्यों किया? तुम अपने आप से झूठ बोल रहे हो। यदि तुम्हें चेतनता के दृष्टिकोण से पता

है तो भी तुम्हें पता है क्योंकि तुम्हारे बहुत से विचार व कार्य तुम्हारे अचेत मन से ही उत्पन्न होते हैं। वह हिस्सा जो तुम्हें प्रेरित कर रहा है, वह भी तुम्हारा ही है। तुम उसे नियन्त्रित करना सीख सकते हो।

मेराः मेरा लिए नहीं

हम अपने कार्यों को इस प्रकार से करें ताकि वे हमारे लिए तथा दूसरों के लिए समस्या न बन जाएँ। यदि हम अपनी मनोवृत्ति को बदलना सीख लें तो फिर हम खुश रह सकते हैं। जब भी हमने कुछ करना हो तो हमें यह देख लेना चाहिए कि हम किस तरीके से करें ताकि हम उसके साथ बँध ही न जाएँ। हमें उन चीजों के साथ मोह नहीं डालना चाहिए। संसार की चीजें हमारे द्वारा प्रयोग में लाने के लिए हैं लेकिन वे हमारी नहीं हैं। हमारी सारी खुशी समाप्त हो जाती है। जबकि हम उन्हें अपनी बना लेते हैं। जब हम उन्हें अपनी बना लेते हैं तो हम उनके साथ मोह डाल लेते हैं जबकि यहाँ पर हमारा तो कुछ भी नहीं है। जो हमें दुखी करता है, वह है मेरा घर, मेरी कार, मेरा यह व मेरा वह। जिस चीज के साथ तुम मेरा जोड़ोगे वही समस्या बन जाएगी। हम उनके साथ मोह डाल लेते हैं। मोह संताप है, फिर हम उनका सुख नहीं ले सकते हैं, स्वाद नहीं ले सकते हैं।

क्या तुम जानते हो कि हम लोग सुबह से शाम तक किन शब्दों का इस्तेमाल करते हैं। हम लोग तो अपना सारा समय 'मैं' व 'मेरा' बताने में ही लगे रहते हैं। मैंने यह कर दिया है, मैं उदास हूँ, मैं खुश हूँ, मैं अमीर हूँ, मैं गरीब हूँ आदि। लेकिन यदि कोई पूछ ले कि तुम सदा ही 'मैं' की बात करते रहते हो, कृप्या यह बताओ कि यह 'मैं' क्या है? फिर तुम्हें चुप ही हो जाना पड़ेगा। यदि कोई कहे कि क्या यह शरीर 'मैं' है? तुम कहोगे, नहीं, यह तो केवल मेरा शरीर है। फिर 'मैं' कहाँ है? जिसके बारे में तुम सदा बात करते रहते हो क्या तुम उस 'मैं' को जानते हो? वह 'मैं' क्या है? जब तुम अपने बारे में जानना शुरू कर देते हो तो फिर तुम जिस एक चीज के बारे में चेतन हो जाते हो, वह होती है - 'मैं'। वह 'मैं' जो कि तुम्हारे अन्दर ही है। 'मैं' को जानने का केवल एक ही तरीका है और वह यह है कि तुम अपने आप को पूछो कि 'मैं कौन हूँ'? यदि तुम अन्य लोगों को पूछो कि मैं कौन हूँ? हम क्या करने की कोशिश कर रहे हैं? परमात्मा क्या है? निजत्व क्या है? आत्म सिद्धि क्या है? तो फिर लोग सोचेंगे कि तुम तो पागल हो चुके हो। अपने आप को जानने के लिए 'मैं' को पहचानने के लिए तुम्हें दूसरों की सलाह की जरूरत नहीं है। इसके लिए तुम्हारे पास अपनी शक्ति है और उस शक्ति के द्वारा तुम अपने आप को जान सकते हो।

यदि तुम बिल्कुल अन्धेरे कमरे में हो जहाँ पर कि तनिक सा भी प्रकाश न हो तुम्हें यह भी पता न चल पा रहा हो कि तुम्हारे हाथ कहाँ पर हैं। लेकिन फिर भी तुम्हें यह किस प्रकार से पता होता है कि तुम्हारे हाथ कहाँ हैं? तुम्हें अपने आपको जानने के लिए किसी भी बाहरी प्रकाश की आवश्यकता नहीं है क्योंकि तुम्हारे अन्दर अपने आपको जानने की सामर्थ्य है। सबसे पहले अपने आपको जानना सीखो। पुरातन लोग बतलाते हैं कि यदि तुम किसी ब्रह्मज्ञानी को पूछो कि मैं कौन हूँ? क्या मैं यह शरीर हूँ? तो वे (ब्रह्मज्ञानी) कहेंगे कि नहीं तुम शरीर नहीं हो, बल्कि यह तुम्हारा शरीर है। फिर क्या मैं इन्द्रियाँ हूँ? नहीं इन्द्रियाँ तो तुम्हारी हैं, तुम इन्द्रियाँ नहीं हो। फिर क्या मैं श्वास हूँ? नहीं, शरीर, इन्द्रियाँ व श्वास आदि तुम नहीं हो, फिर क्या मैं मन हूँ? नहीं, मन तो परिवर्तनशील है। जिस प्रकार से तुम सोचते हो मन तो उसी प्रकार का हो जाता है। मन तो हमेशा कार्य करता ही रहता है, यह तो निरन्तर डोलता ही रहता है। अतः तुम मन नहीं हो। फिर मैं क्या हूँ? वास्तव में तुम शरीर, इन्द्रियाँ व मन के पीछे हो। जो मन, इन्द्रियाँ और शरीर के पीछे होकर सब कुछ देख रहा है, तुम वह हो।

'चलता'

(पृष्ठ 52 का शेष)

2) हमने सतगुरू जी की संगत वाला उत्तम मार्ग चुना है जिस पर चलने से यमदूतों का भय भी मिट जाता है, कीरत भट्ट की यही एक विनती है कि हे गुरू रामदास जी! आप हमें अपनी शरण में रखो जी।

सल्ल भट्ट के केवल दो सवैये हैं। आप जी गुरू रामदास जी की उपमा को इस प्रकार से कथन करते हैं कि -

सिरि आतपतु सचौ तखतु जोग भोग संजुतु बलि ॥
गुर रामदास सचु सलु भणि
तू अटलु राजि अभगु दलि ॥ ***अंग - 1406***

अर्थात - (गुरू रामदास जी) आप जी के सिर के ऊपर छत्र है, आप जी का तख्त सदैव स्थिर है, आप राजभाग तथा योगावस्था दोनों को जीते हो तथा आप आत्मिक योद्धा हो। हे सल्ल कवि! तुम सच्ची बात कहो कि हे गुरू रामदास जी! आप अटल राज्य वाले तथा दैवी स्वरूप यानि कि कभी भी नष्ट न होने वाली फौज के स्वामी हो जी।

रतवाड़ा साहिब में महापुरुषों के प्रवचनों का कार्यक्रम

प्रत्येक रविवार रतवाड़ा साहिब

(12.00 बजे से 4.00 बजे तक)

पूर्णमाशी - 24 अक्टूबर, दिन बुद्धवार।

(रात्रि 07.00 बजे से 10.00 बजे तक)

संक्रान्ति - कतिक, 17 अक्टूबर, दिन बुद्धवार।

(प्रातः 5.30 बजे से 8.00 बजे तक)

अमृत संचार - महीने के प्रथम रविवार को गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब में सुबह 11.00 बजे होता है।

INTERNET MEDIA AND LIVE TELECAST

Website : www.ratwarasahib.in

Website : www.ratwarasahib.org

Instagram : RATWARA SAHIB (https://instagram.com/ratwara.sahib/)

You Tube : https://www.youtube.com/user/babalakhbirsingh

Facebook : https://www.facebook.com/ratwarasahib1

Twitter : https://mobile.twitter.com/ratwarasahib13

Live Audio Link 1 - https://www.awdio.com/Ratwara Sahib

Live Audio Link 2 - https://mixlr.com/ratwara-sahib

E-mail :- sratwarasahib.in@gmail.com

Contact - 9569455861, 9417912900, 9814612900

आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यिूवल या दसवंद पंजाब एंड सिंध बैंक की किसी भी शाखा द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में भेजी जा सकती है।

भारत (INDIA)

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यिूवल भेजने के लिए -

VGRMCT / Atam Marg Magazine
S/B A/C No. 12861000000003 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

दसवंद भेजने के लिए -

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
SB A/C No. 12861100000005 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

विदेश (ABROAD)

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
Punjab National Bank SB A/C No. 0779000100179603
RTGS/IFSC Code - PUNB0077900 Branch Code - 077900

यदि चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा राशि भेजनी हो तो ऊपरलिखित खातों अनुसार **Gurdwara Ishar Parkash Ratwara Sahib, P.O. Mullanpur Garibdas. Distt S.A.S. Nagar (Mohali) - 140901** पर भेजने की कृपा करें। यदि **Online** राशि भेजनी हो तो राशि की जानकारी देते समय अपना नाम व पूरा पता मोबाइल नं. +91-98889-10777 पर **SMS** भेजें जी।

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि यदि आपने अभी तक आत्म मार्ग मासिक पत्रिका की सदस्यता ग्रहण नहीं की है तो आप कृप्या अधोलिखित प्रारूप पत्र को भरकर सदस्यता ग्रहण करने की कृपा करें। यदि आप पहले से ही सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं, तो पुनर्नवीनीकरण हेतु इस प्रारूप पत्र के साथ आवश्यक चैक/ड्राफ्ट "VGRMCT/ATAM MARG MAGAZINE" के नाम पर प्रेषित करने की कृपा करें।

Subscription form ✓ ☐ नई सदस्यता ☐ पुनर्नवीनीकरण ☐ आजीवन सदस्यता

within India

Subscription Period	By Ordinary Post/Cheque	By Registered Post/Cheque
1 Year	Rs. 300/320	
3 Year	Rs. 750/770	
5 Year	Rs. 1200/1220	
Life	Rs 3000/3020	

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 $
Europ	50 Euro	500 Euro
Australia	80 Aus $	800 Aus $

जनवरी ☐ फरवरी ☐ मार्च ☐ अप्रैल ☐ मई ☐ जून ☐ जुलाई ☐ अगस्त ☐ सितम्बर ☐ अक्तूबर ☐ नवम्बर ☐ दिसम्बर ☐

नाम/Name पता/Address.....

.....

.....Pin Code..... Phone ..... E-mail :.....

सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल, रतवाड़ा साहिब

समय - सुबह 9.30 बजे से 2.00 बजे तक (रविवार से शुक्रवार)

डाक्टरों का समय - सुबह 10.00 बजे से 12.00 बजे तक

दूरभाष नं. 98786-95178, 92176-93845

डा. का नाम	विशेषज्ञ	दिन
1. डा. जसबीर कौर	जनरल मैडिसन	सोमवार
2. डा. गुरिंदर कौर कंग	एम. डी. (गाइनी)	सोमवार
3. डा. कुलदीप सिंह कंग	एम. डी. (आँखों के विशेषज्ञ)	सोमवार
4. डा. हरबंस सिंह	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	मंगलवार
5. डा. तेजिंदर सिंह	जनरल मैडिसन	मंगलवार
6. जे.पी.आई. अस्पताल मोहाली के डाक्टर	आँखों के विशेषज्ञ	मंगलवार
7. डा. जतिन्दर सिंह तथा डा. कोमलप्रीत कौर	दाँतों के विशेषज्ञ	मंगलवार
8. श्री माइकल जी	एक्स-रे विशेषज्ञ	मंगलवार तथा वीरवार
9. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	बुद्धवार
10. डा. जे. एस. गुजराल	जनरल मैडिसन/शिशु रोग विशेषज्ञ	बुद्धवार
11. डा. आर. एस. संधू	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	वीरवार
12. डा. संतोष अनेजा	जनरल मैडिसन	वीरवार
13. डा. एस. के. बांसल	जनरल मैडिसन	शुक्रवार
14. डा. बरिन्दर सिंह	जनरल मैडिसन तथा त्वचा रोग विशेषज्ञ, एअरो स्पेस मैडिसन	शुक्रवार
15. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	रविवार
16. डा. जिंदल	जनरल मैडिसन	रविवार
17. डा. गुरप्रीत कौर गिल	होम्योपैथिक	बुद्धवार
18. बीबी हरनीत कौर	फिजियोथरैपिस्ट	सोमवार तथा शुक्रवार

-: लैबोरेटरी टैस्ट तथा अन्य सुविधाएँ :-

1. खून टैस्ट, 2. सारे खून सैल काउंट टैस्ट 3. ब्लड शुगर टैस्ट, 4, किडनी टैस्ट, 5. लीवर टैस्ट, 6. लिपिड परोफाइल टैस्ट, 7. थायराइड टैस्ट, 8. हिमोग्लोबिन टैस्ट, 9. पेशाब टैस्ट, 10. स्टूल टैस्ट, 11. ई.सी.जी., 12. एक्स-रे (क्ष-किरण)

सारे लैबोरेटरी टैस्ट आधे शुल्क पर किये जाते हैं तथा मरीज को दवाई मुफ्त दी जाती है।

जरूरी सूचना

प्रत्येक रविवार को अस्पताल खुला रहेगा। समय 11.00 से 1.00 बजे तक। प्रत्येक शनिवार को अस्पताल बन्द रहेगा।

मई महीने से पूर्णमाशी के समागम दिन की जगह रात को हुआ करेंगे। समय शाम 7.00 बजे से रात 10.00 बजे तक।

विश्व गुरमत रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट

के मुख्य संस्थापक प्यारे महापुरुष सन्त बाबा वरियाम सिंह जी द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तकें

यह पुस्तकें श्री गुरू ग्रन्थ साहब जी के गूढ़ सिद्धान्तों को सरल रूप में स्पष्ट करके जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। इनकी विषय वस्तु के रूप में नाम, सेवा व स्मरण की विधियों को प्रस्तुत करते हुए जन साधारण की भाषा का अत्यन्त सरल, मार्मिक व हृदयस्पर्शी प्रयोग किया गया है। यह दुर्लभ पुस्तकें, प्रत्येक जिज्ञासु व साधक के लिए एक अमूल्य निधि के रूप में हैं। अध्यात्मिक सुख व शान्ति प्राप्त करने हेतु आप इन्हें प्राप्त करके स्वयं पढ़ें तथा अन्य श्रद्धालुजनों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। यह सभी पुस्तकें गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहब में आपकी सेवार्थ उपलब्ध हैं -

हिन्दी	
1. सुरति शबद मार्ग	70/-
2. किव कुड़ै तुटै पालि	35/-
3. बात अगंम की - सात भागों में	400/-
4. किव सचिआरा होइए - भाग पहला	35/-
5. किव सचिआरा होइए - भाग दूसरा	65/-
6. किव सचिआरा होइए - भाग तीसरा	100/-
7. होवै आनन्द घणा	30/-
8. बाबाणियाँ कहानियाँ	50/-
9. सुरतिआं उपजै चाउ	40/-
10. सर्व प्रिय गुरू गोबिंद सिंह जी	10/-
11. भक्त प्रहलाद	10/-
12. अमृत फुहार	10/-
13. अगम अगोचर का मार्ग	70/-
14. जपुजी साहिब सटीक	15/-
15. अमर ज्योतियाँ	15/-
16. अमर गाथा	100/-
17. वैशाखी	10/-
18. साजन चले प्यारिआ	10/-
19. अविनाशी ज्योति - भाग 1	90/-
20. रूहानी गुलदस्ता	70/-
21. चउथै पहरि सबाह कै	60/-

English Version	Price
1. Baisakhi	Rs. 5/-
2. How Rend The Veil of Untruth	Rs. 70/-
C. Discourses on the Beyond -1	Rs 50/-
4. Discourses on the Beyond -2	Rs. 50/-
5. Discourses on the Beyond -3	Rs. 50/-
6. Discourses on the Beyond -4	Rs. 60/-
7. Discourses on the Beyond -5	Rs. 60/-
8. The way to the imperceptible	Rs. 80/-
9. The Lights Immortal	Rs. 20/-
10. Transcendental Bliss	Rs. 70/-
11. How to Know Thy Real Self-(Vol-1)	Rs. 80/-
12. How to Know Thy Real Self-(Vol-2)	Rs. 80/-
13. How to Know Thy Real Self-(Vol-3)	Rs. 110/-
14. The Dawn of Khalsa Ideals	Rs. 10/-
15. A Glimpse of His Holiness - Baba ji	Rs. 5/-
16. Divine Word Contemplation Path	Rs. 150/-
17. The Story of Immortality	Rs. 260/-
18. Why not Contemplate the Lord	Rs. 200/-

ऊपरलिखित पुस्तकें आप जी मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा रतवाड़ा साहिब से मंगवा सकते हैं या ट्रस्ट के अकाउंट में राशि जमां करवा कर मोबाइल नं. 9417214391, 9592009106, 9417214379 पर सूचित कर सकते हैं। **Bank Name : Pb & Sind Bank, A/c Name. VGRMCT/Atam Marg Magazine, S/B A/C No. 12861000000003, RTGS/IFSC Code - PSIB0021286, Branch Code - C1286**

रूहानी कीर्तन

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी की जत्थे समेत

प्रचार फेरी - कनाडा तथा अमेरिका

सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज
रतवाड़ा साहिब

सन्त माता रणजीत कौर जी
रतवाड़ा साहिब

-: Canada :-

4 January 2019 to 28 January 2019

Address	Date	Contact	
Taronto	4 January 2019 to 6 January 2019	Bhai Avtar Singh	+1- 647-968-5039
		Jatinder Kaur	+1- 416-277-1375
		Bhai Jatinder Pal Singh	+1- 647-720-4100
Edmonton, Alberta	7 January 2019 to 20 January 2019	S. Raghbir Singh	+1- 431-336-4555
		S. Hardeep Singh Lall	+1- 780-990-6738
		S. Malkit Singh Khabra	+1- 780-340-3851
Calgary, Alberta	21 Janauary	S. Gurmej Singh Bains	+1- 403-589-7311
Kelowna	23 January 2019	Sonu ji, Kelowna	+1-250-899-6781
Prince Rupert,	28 January 2019	Bhai Paramjeet Singh	+1-260-600-3072
		Bhai Jasbir Singh Rano	+1-778-240-4610
			+1-778-574-3213
		Bhai Amit ji, Surrey	+1-604-767-4781
		Bhai Harjeet Singh Jiti	+1-778-987-4701

Any time you need any information for program, should you contact this number Bhai Raghubir Singh Raju +1-431-336-4555

-: USA :-

1 February 2019 to 15 March 2019

Indiana, ohio Maryland	1 February 2019 to 15 February 2019	Bhai Manjit Singh	+1-317-488-8831
California	16 February 2019 to 15 March 2019	Bhai Amardip Singh	+1-408-393-8199

आवश्यक निवेदन :- आत्म मार्ग रूहानी पत्रिका की नव-सदस्यता तथा महापुरुषों द्वारा लिखित पृथक-पृथक विषयों पर आधारित पुस्तकों का विशेष प्रबन्ध होगा।

साहिब श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी के गुरूगद्दी दिवस
ब्रह्मलीन श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी तथा
ब्रह्मलीन सन्त माता रणजीत कौर जी की
मधुर स्मृति में
महान गुरमति रूहानी समागम
30, 31 अक्टूबर
1, 2 नवम्बर
रतवाड़ा साहिब
श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज
माननीया माता रणजीत कौर जी
बाबा लखबीर सिंह जी
रतवाड़ा साहिब
अमृत संचार
1, 2 नवम्बर
सुबह: 10.00 बजे
ट्रान्सपोर्ट/सवारी हेतु सम्पर्क नंबर -
98155-94315
81465-98982
महापुरुषों द्वारा प्रकाशित साहित्य
अर्द्धमूल्य पर उपलब्ध होगा
नाम अभ्यास
ब्रह्ममुहुर्त में महापुरुषों द्वारा
बताई गई युक्ति अनुसार
नि:शुल्क चिकित्सा शिविर
आँखों का नि:शुल्क आप्रेशन
शिविर 27 से 31 अक्टूबर
चिकित्सा विशेषज्ञों द्वारा
चिकित्सय परीक्षण तथा
नि:शुल्क दवाईयां
नि:शुल्क कैंसर परीक्षण शिविर
30 से 31 अक्टूबर
समागम के
सम्बन्ध में
दूसरी मीटिंग - 14 अक्टूबर - रविवार - समय 1.30 बजे दोपहर से 3.00 बजे सायं तक
प्रार्थक - विश्व गुरमति रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट, रतवाड़ा साहिब
न्यू चण्डीगढ़
मोबाइल: 96461-01996, 98551-32009, 94172-14378,
98889-10777, 98146-12900

साहिब श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी के गुरूगद्दी दिवस
ब्रह्मलीन श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी तथा
ब्रह्मलीन सन्त माता रणजीत कौर जी की
मधुर स्मृति में
महान गुरमति रूहानी समागम
30, 31 अक्टूबर
1, 2 नवम्बर
रतवाड़ा साहिब
श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज
माननीया माता रणजीत कौर जी
बाबा लखबीर सिंह जी
रतवाड़ा साहिब
अमृत संचार
1, 2 नवम्बर
सुबह: 10.00 बजे
ट्रान्सपोर्ट/सवारी हेतु सम्पर्क नंबर -
98155-94315
81465-98982
महापुरुषों द्वारा प्रकाशित साहित्य
अर्द्धमूल्य पर उपलब्ध होगा
नाम अभ्यास
ब्रह्ममुहुर्त में महापुरुषों द्वारा
बताई गई युक्ति अनुसार
नि:शुल्क चिकित्सा शिविर
आँखों का नि:शुल्क आप्रेशन
शिविर 27 से 31 अक्टूबर
चिकित्सा विशेषज्ञों द्वारा
चिकित्सय परीक्षण तथा
नि:शुल्क दवाईयां
नि:शुल्क कैंसर परीक्षण शिविर
30 से 31 अक्टूबर
समागम के
सम्बन्ध में
दूसरी मीटिंग - 14 अक्टूबर - रविवार - समय 1.30 बजे दोपहर से 3.00 बजे सायं तक
प्रार्थक - विश्व गुरमति रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट, रतवाड़ा साहिब
न्यू चण्डीगढ़
मोबाइल: 96461-01996, 98551-32009, 94172-14378,
98889-10777, 98146-12900